जेल जीवन के संस्मरण

—तनसिंह

प्रकाशक :
श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास
ए/8, तारानगर, झोटवाड़ा
जयपुर 302012
दूरभाष : 2466353

श्री क्षत्रिय युवक संघ ग्रन्थमाला का पुष्प

प्रथम संस्करण : **1990**
चतुर्थ संस्करण : **2019**

मूल्य : **रुपये पन्द्रह मात्र**

मुद्रक :
गजेन्द्र प्रिन्टर्स,
सांगों का मन्दिर, सांगों का रास्ता,
किशनपोल बाजार, जयपुर
दूरभाष : 2313462

विषयानुक्रमणिका

- गिरफ्तारी और पुलिस संरक्षा 5
- राजस्थान का अंडमान 8
- अखबारों की कहानी 10
- सुविधाएँ 16
- भूख-हड़तालें 23
- भोजन व्यवस्था 29
- मिलन 32
- बन्दी जीवन के दो माह 37
- अभागे बन्दी 39
- दल बन्दियाँ और षड़यन्त्र 43
- बिगड़े हुए इन्सान 47

पूर्वकथन

वेद का वचन है 'मनुर्भव' अर्थात मनुष्य बनो। आज का मानव जब दानवी पद–चिन्हों के अनुगमन में शीघ्रता कर रहा है, तब इस वचन का महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है । मनुष्य स्वयं भी बनो तथा दूसरों को भी बनाओ। स्वयं मनुष्य बनना अपनी साधना का क्षेत्र है,तो दूसरों को मनुष्य बनाना शिक्षण का क्षेत्र है। जैसा कि इस पुस्तक के अन्त में आया है, इस शिक्षण के क्षेत्र के लिए पाठशाला तथा जेल अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान हैं। जेल, जहाँ मनुष्यत्व के पथ से हटे हुए लोगों को मनुष्य बनाने के महत्त्वपूर्ण कार्य का उत्तरदायित्व है, वहाँ कैसी शोचनीय व्यवस्था है, यह इस पुस्तक में स्पष्ट होता है। देश को स्वतंत्रता प्राप्त होने के 9 वर्ष बाद की जेलों की स्थिति जैसी बनी हुई थी उससे हम भली प्रकार इस निर्णय पर पहुँच सकते हैं, कि मनुष्य बनाने के लिए बनी इस महत्त्वपूर्ण संस्था की कितनी दयनीय और उपेक्षा पूर्ण स्थिति सरकार ने बना रखी है।

भूस्वामी संघ के दूसरे आन्दोलन के समय गिरफ्तारी के बाद लेखक को टोंक जेल में रखा गया था। 'ए' क्लास के राजनैतिक बन्दियों के साथ राजनैतिक कारणों से दुर्व्यवहार करना प्रजातंत्र का मजाक उड़ाना है। मतभेद होना तो साधारण बात है, लेकिन मतभेद के कारण दूसरे के साथ अनुचित व्यवहार करना चरित्र की न्यूनता ही सिद्ध करता है। 'संघशक्ति' पत्रिका के प्रथम अंक जनवरी 1960 से प्रारम्भ होकर नवम्बर 1960 तक ये प्रकरण धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुए थे, उन्हीं को पुस्तक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

प्रकरण : एक

गिरफ्तारी और पुलिस संरक्षा

जिस दिन समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ कि मुझे एक माह में न्यायालय में अपने आपको सुपुर्द कर देना है, उसी दिन मैंने निश्चय कर लिया कि मुझे गिरफ्तार होना है। सत्याग्रह के तत्कालीन डिक्टेटर श्री कुँ आयुवानसिंह जी से स्वीकृति लेनी थी, स्वीकृति मुझे ता. 30.1.56 को प्राप्त हो गई। रात को दांता हाउस में प्रवेश पा गया और सुबह से खुला ही रहने लगा। करीब 12.45 बजे श्री जसवन्तसिंह जी डी.आई.जी. पुलिस (सी.आई. डी.) नागरिक वेश में दांता हाउस में जीप में बैठकर अपने ड्राईवर के साथ आए। उस समय दांता हाउस में भूस्वामी सत्याग्रहियों और कार्यकत्ताओं के समक्ष भाषण दे रहा था। मैंने भाषण बन्द नहीं किया। संक्षेप में उन्हें बताया कि त्याग कभी किसी का व्यर्थ नहीं जाता, सफलता के लिए हमें कार्य नहीं करना चाहिये किन्तु ध्येय निष्ठ होकर जो कार्य करता है, सफलता उसी के पीछे आती है। अंगद ने रावण के दरबार में अपना पैर जमा कर उसे हटाने की चुनौती दी थी। सत्य के लिए बढ़ने की गति में शक्ति अकाट्य होती है इसलिए रावण के दरबार में अंगद के पैर को हटाने की शक्ति किसी में न रही। हमारा सत्याग्रह भी अंगद का पैर है। पुलिस वाले आज जो रावण से बढ़कर पाशविकता पर उतर आए हैं, कल स्वयं लज्जित व पराजित होंगे।

भाषण की समाप्ति पर मैंने डी.आई.जी. पी. से गिरफ्तार होने की इच्छा प्रकट की। जीप में मेरा बिस्तर डाल दिया गया। भूस्वामियों ने जीप घेर ली और नारे लगाते हुए आगे–आगे चलने लगे। डी.आई.जी.पी. बोले कि मैं राजपूत हूँ इसलिये जीप के आगे से लोगों को हटाकर,जाने के लिए रास्ता दिलवाएं। मैंने उनकी बात में सच्चाई का अनुभव किया और कार्यकर्त्ताओं को रास्ता देने के लिए कहा किन्तु मेरे सामने हां भरते हुए भी उन्होंने रास्ता नहीं दिया। एक क्षण में मुझे कुछ कुछ क्रोध आया कि कार्यकर्ता अनुशासित नहीं हैं, किन्तु दूसरे ही क्षण अनुभव किया कि अब मैं एक बन्दी हूं, इस समय मुझे साधारण नागरिकों के भी अधिकार नहीं हैं। ऐसी स्थिति में क्या मेरी आज्ञा का पालन करना कार्यकर्ताओं का वैधानिक विशेषाधिकार है। तब मैं भी मौन हो गया। मार्ग न पाकर डी.आई.जी. पी. ने जीप को उल्टा मोड़ा और पीछे के रास्ते से सीकर हाऊस के पास होकर बनीपार्क,मिर्जा इस्माइल रोड़ होते हुए

आई.जी. पी. के दफ्तर पहुँचे। मैं आई.जी. पुलिस से भी मिला। उन्होंने आन्दोलन के विषय में कहा कि जनमत आपकी ओर नहीं हो सकता। आपने सरकार को नोटिस नहीं दिया। मैने उन्हें बताया कि नोटिस हमने दे दिया था और समय ही बताएगा कि जनमत किस ओर है ? साथ ही मैंने पुलिस की ज्यादतियों के विषय में उनका ध्यान आकृष्ट किया। मैने उन्हें कहा कि हमें हारने और जीतने दोनों में लाभ है लेकिन मौजूदा रवैये में पुलिस दोनों ही स्थिति में घाटे में ही रहेगी। बातचीत बढ़ाते हुए मैंने इसी बात को स्पष्ट किया कि यदि हम लोग हार जाते हैं तो कांग्रेस के राजस्थान में सदा के लिए पैर उखड़ जायेंगे। हार के बाद लाखों भूस्वामियों के मन में सरकारी दमन के प्रति बदले की भावना पैदा होगी और वह असन्तोष धीरे–धीरे कांग्रेसी सरकार की जड़ में दीमक का काम करेगी। निकट भविष्य में ही वह जनता का विश्वास खो देगी। राजपूतों को जनता का अंग न मानकर उपेक्षा का अर्थ होगा जनता का विश्वास खोना, यदि भूस्वामी जीत जाते हैं तो लाभ स्पष्ट है ही। आई.जी.पी. ने हंसते हुए गीता का श्लोकांश बोला 'हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्' और मैने –'तस्मादुतिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः'' कह कर पूरा किया। आगे मैने कहा कि हमारी हार और जीत दोनों ही से आपके विभाग के पाप नहीं धुल सकेंगे और हम समझौते में यह पहली शर्त रखेंगे कि पुलिस अत्याचारों के खिलाफ जांच की जाय जिसमें आपको परेशानियाँ ही उठानी पड़ेगी। उन्होंने मुझे विश्वास दिलाया कि वे सारी बातों की जांच करेंगे। परबतसर और नागौर केन्द्रों की मैंने उन्हें जो अत्याचारों की सूचना दी उसकी भी उन्होंने जांच का विश्वास दिलाया। इसी प्रकार की अन्य बातें होने के बाद मैं बाहर लाया गया । उसके बाद मुझे डी.आई.जी.पी. हैड क्वार्टर्स के कार्यालय में लाया गया और वहाँ श्री जगन्नाथन का परिचय कराया गया। वहाँ उन्होंने मुझे मेरा वारण्ट बताया और जयपुर जिलाधीश की आज्ञा की नकल देकर हस्ताक्षर लिए। उस समय दोपहर के ढाई बजे मेरी गिरफ्तारी कागजों में बताई गई।

वहाँ से डी.आई.जी.पी.(सी.आई.डी.) के दफ्तर में आए। फर्दें आदि बनाने का काम वहीं हुआ। पुलिस अफसरों का व्यवहार बड़ा नम्रता भरा और दोस्ताना था जैसे वे यह परिचय दे रहे हों कि हम प्रदर्शनकारी भूस्वामियों के प्रति भी इतने ही नम्र हैं। इसके बाद गुप्तचर विभाग के कई अफसर भी आते और मिलते रहे। मेरा जहाँ तक अनुमान है वे सब मुझे देखकर पहचानना चाहते थे कि भविष्य में कभी मौका पड़े तो मुझे पहचानने में उन्हें दूसरों की मदद न लेनी पड़े। मेरा फोटो उतरवाने के लिए पुलिस विभाग का फोटोग्राफर बुलाया गया किन्तु फोटो के लिए मैंने साफ इनकार कर दिया।

लगभग साढे चार बजे मुझे श्री मुकुट एक बंद जीप में टोंक की ओर लेकर रवाना हुए। साथ में तीन सशस्त्र सिपाही,एक ड्राईवर और एक श्री कुबेरदान नामक गुप्तचर विभाग के कर्मचारी थे, जो मेरे परिचित भी थे और सम्भवतः इसीलिए मेरे साथ भेजे गये थे कि बातों ही बातों में वे उनके काम की कोई बात निकाल सकें। इसीलिए रास्ते भर उन्होंने बहुत तारीफें बघारी कि आन्दोलन में संगठन तगड़ा है और हमें बहुत कम बातें मालूम होती हैं। डी. आई.जी. पी .(सी.आई.डी) के दफ्तर में भी यही पाशे मुझ पर फेंके गए और बार बार तारीफें की जाती रही कि आपके स्वयंसेवक किसी को कुछ भी नहीं बताते। लेकिन मैं पहले से ही सतर्क था और एक भी ऐसी बात प्रगट नहीं की जो उनके काम की हो। श्री कुबेरदान ने कहा कि उन्हें श्री आयुवानसिंह का तो पता है और सात फरवरी से पहले पहले उन्हें गिरफ्तार कर लूंगा। मैने कहा मैं तो इस आन्दोलन में एक साधारण सिपाही हूँ वे तो इसके नेता हैं। मैंने ही तुम्हारी छकड़ी गुम कर दी तो वे भला क्या पकड़े जायेंगे ? यदि आप सात तारीख तक उन्हें गिरफ्तार कर लेते हैं,तो मैं आपका जन्म भर बिना टके पैसे नौकर रह जाऊंगा। मैने उन्हें बताया कि यदि वे इच्छुक ही हों तो मुझ से टोंक जेल में तारीख 20–2–56 को मिल लें और उस दिन मैं बता दूंगा कि वे किस तारीख को कहां पकड़े जायेंगे। बातों ही बातों में टोंक पहुंच गए। यहाँ के कलैक्टर श्री गोरधन सिंह मिर्धा थे, वे पहले बाड़मेर में रह चुके थे और मैं जानता था कि वे किस प्रकार के व्यक्ति हैं। मैने पुलिस कर्मचारियों को कह दिया कि मैं जीप से नहीं निकलूंगा और न ही कलैक्टर को कोई सम्मान प्रदर्शित करूंगा। लेकिन थोड़ी ही देर में स्वयं कलैक्टर हमारी जीप पर मेरा कुशल क्षेम पूछने आ गए और उस समय मुझे भी शिष्टाचार दिखाना पड़ा। कलैक्टर ने टोंक जेल को पहले ही टेलीफोन से इत्तला कर दी थी, अतः हमारी जीप जेल के दरवाजे पर पहुँची तो आगे ही श्री रामदयाल जी डिप्टी जेलर, जिन्हें मैं सुविधा की दृष्टि से आगे जेलर ही कहूंगा–मिले। उनके अलावा श्री हनीफ खां हैड वार्डर खड़े थे। हनीफ खां की भयानक मूंछों को देखकर मुझे टोंक जेल की सुविधाओं का अन्दाज लग गया था किन्तु बिना मूंछों के जेलर को देखकर मैंने संतोष की सांस ली। थोड़ी देर तक आवश्यक लिखा पढ़ी के बाद पुलिस अधिकारियों ने विदा ली और मैं एक नये पहाड़ पर चढने के लिए छोड़ दिया गया।

प्रकरण : दो

राजस्थान का अंडमान

यह बात नहीं कि यह मेरी पहली ही जेल यात्रा है, इससे पहले भी मैं दो बार जेल जा चुका हूँ, लेकिन टोंक जेल में मेरा आने का पहला ही अवसर था। आते समय जो व्यवहार यहां के कर्मचारियों का था उससे मुझे कभी यह भान नहीं हुआ कि मैं यहाँ से इतना महत्त्वपूर्ण और मनोरंजक अनुभव लेकर जाऊंगा। आते ही मुझे श्री सवाईसिंह धमोरा के साथ रखा गया।

अस्पताल की लोहे वाली स्प्रिंग वाली खाट मिली। बिस्तर लगाकर बैठा ही था कि सवाईसिंह ने मुझ पर प्रश्नों की बौछार कर दी। गिरफ्तारियों की संख्या क्या हो गई ? तलाशियाँ कहाँ कहाँ ली गई ? क्या क्या वस्तुएँ तलाशियों में प्राप्त हुई ?अखबारों का क्या रुख है ?काम करने वालों को क्या क्या कठिनाईयाँ आती हैं। इत्यादि–इत्यादि। ऐसा प्रतीत हुआ कि खबरों के लिए सवाईसिंह को बहुत बुरी तरह भूख लगी हुई थी। मुझे उसकी गिरफ्तारी से लेकर मेरी गिरफ्तारी तक एक एक घटना को बताना पड़ा। इससे पहले इन्द्रसिंह उससे मिल चुका था किन्तु जेलर की उपस्थिति के कारण विस्तृत खबर नहीं दे सका। मैंने सवाईसिंह के हाल पूछे तो मालूम हुआ कि उसे सिर्फ एक ही अखबार 'हिन्दुस्तान' मिलता है। जो यहाँ जेल में पहले ही से आता था। उसने बताया कि स्वीकृत सूची समाचार पत्रों की है उसमें पुराने अखबार हैं, नयों में सिर्फ ''राष्ट्रदूत'' है किन्तु उसके लिए एक गुप्त परिपत्र जेल अधिकारियों के पास भेजा गया है जिसमें उन्हें सूचित किया गया है कि ''राष्ट्रदूत'' यदि कोई बन्दी अपने खर्चे से भी मंगाना चाहे तो भी नहीं मंगा सकता।

जब मैने सवाईसिंह की मनोदशा का विश्लेषण करना आरम्भ किया तो आश्चर्य हुआ कि सभा मंच पर चढ़कर किसी भी बड़े आदमी पर आलोचनात्मक आक्रमण करने में रंच मात्र भी झिझक न रखने वाला सवाईसिंह यहाँ आकर केवल सन्तोष पर कैसे गुजर कर रहा है ? सावरकर जैसे नेताओं को अंडमान की जेलों में चक्की क्यों चलानी पड़ी ? इसका यही कारण प्रतीत होता है कि उनके पास इसके सिवाय और कोई चारा नहीं था। उसी प्रकार राजस्थान के इस अंडमान में सवाईसिंह को भी सन्तुष्ट होने के सिवाय और कोई चारा नहीं था। अंडमान जेल की टोंक जेल से तुलना की

गई तो उनमें सिर्फ इतना ही अन्तर था कि अण्डमान में हण्टरों और डंडों के बल पर काम लिया जाता था, वह ब्रिटिश सरकार की जेल थी और यह काँग्रेसी सरकार की जेल है जिसमें हर संभव प्रयत्न से काम लिया जाता है। रोटी के लिए सवाईसिंह को जेल के दफ्तर में श्रम करना पड़ता था और बाहर क्या हो रहा है,इसका उसे कुछ भी भान नहीं था। जिज्ञासा होते हुए भी कुछ कर नहीं पा रहा था।

बातचीत के बाद में रात्रि को बड़ी देर से नींद आई। सवाईसिंह इसी बारक में अकेला रहता था। रात को एक बार उसने एक बड़ा दुःस्वप्न देखा। दूसरे दिन वार्डरों को उसने पूछा तो हनीफ खां हैड वार्डर ने बुजुर्गाना अनुभवों के लहजे में कहा–''हाँ साहब, इसमें 'कुछ' है पहले भी एकाध मर्तबा ऐसा किस्सा हो चुका है।''अकेला व्यक्ति जो अपने स्वजन के शोक को भुला ही न पाया हो कि उसे जेल में ठूंस दिया गया हो और उस पर इस प्रकार की मनगढ़न्त और शरारतपूर्ण भय के साम्राज्य की स्थापना करना निसन्देह राजस्थान के अंडमान के अनुरूप ही आचरण है। सवाईसिंह के प्रेतभय को मिटाने के लिए समझाया गया कि प्रेतात्माएं होंगी तो भी वे सूक्ष्म शरीर वाली होती हैं। उनका उपरोक्त शरीर हमारे स्थूल शरीर का इन्द्रियगम्य नहीं है अतः प्रेतात्माएं यदि हमारे से लिपट भी जायं तो भी न तो हमें उसका बोझ लगेगा और न उसके स्पर्श का ही अनुभव होगा। इस प्रकार कई रोज के संस्कारों के बाद उसको इस भय से मुक्ति मिली।

टोंक जेल को राजस्थान का अण्डमान बताने के कारणों के औचित्य पर आगामी प्रकरणों में प्रकाश डाला जायेगा। पहली रात्रि तक मुझे अनुभव हो रहा था कि मैं जेल में नहीं हूँ तथापि मैंने सोच रखा था कि अधिकारों और सुविधाओं की आवाज उठाते ही दमन के पैंतरे चलेंगे। यहां के जेलर और अधिकारियों की शक्ति को तोल कर मैंने संघर्ष की क्रमिक योजना बना ली और दूसरे ही दिन उसे प्रारम्भ करने का निश्चय कर लिया।

प्रकरण : तीन

अखबारों की कहानी

जेल में आकर प्रत्येक व्यक्ति को बाहर की स्वाभाविक भूख रहती है। जेल अधिकारियों तथा सरकार की भी यही इच्छा रहती है कि बंदियों को इससे वंचित रखा जाय। उसमें भी राजनैतिक बंदियों के साथ विशेष प्रकार की सतर्कता बरती जाती है।

इस जेल में आकर हमें सबसे अधिक समाचार पत्रों के लिये संघर्ष करना पड़ा। हमारी कठिनाई तो यह थी कि हम संख्या में सिर्फ दो ही थे। इसलिये व्यापक रूप से कोई सरदर्द नहीं बन सकते थे। दूसरी कठिनाई यह थी कि टोंक ऐसी जगह है जहाँ समाचार पत्रों का नियमित रूप से आना भी कठिन था।

गिरफ्तारी के दूसरे ही दिन ता. 3–2–56 को हमने अपनी योजना बना ली। राजस्थान कण्डीशन्स ऑफ डिटैन्सन आर्डर 1952,जिसको आगे मैं नियमावली कहूँगा, के नियम 14 के अंतर्गत स्वीकृत पत्रों की एक सूची जेल अधिकारियों को रखनी आवश्यक है। उस सूची में दर्ज किसी भी समाचार पत्र को मंगाया जा सकता है। जेलर ने हमारी इच्छा पर वह सूची बताई तो हमें उसे पढ़कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसमें कई तो ऐसे समाचार पत्र हैं जो कभी के बन्द हो गये हैं और कई ऐसे पत्र थे जो बिलकुल निकम्मे पत्र थे। राष्ट्रदूत और लोकवाणी का नाम जरूर दर्ज था किन्तु राष्ट्रदूत के लिए सरकार ने इस प्रकार की आज्ञाएँ प्रचलित कर दी थी कि कोई भी बंदी अपने पैसों से भी राष्ट्रदूत मंगाना चाहे तब भी उसे इसकी अनुमति नहीं दी जावे। सवाईसिंह जयपुर जेल जाकर वापिस आया तब उसने बताया कि वहाँ भी राष्ट्रदूत नहीं मंगाया जाता, किन्तु उस समय हमारे पास और कोई विकल्प नहीं था,सिवाय इसके कि हम लिखित में अर्जी देकर उसकी प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा करते। सवाईसिंह ने एक प्रार्थना पत्र कलैक्टर को दिया कि उसे लोकवाणी,हिन्दुस्तान स्टैंडर्ड,स्टेट्समैन आदि अखबार दिये जावें। इस पर शाम को उन्हें लोकवाणी आदि की स्वीकृति इस शर्त पर मिली कि उनके दाम हम चुकावें। टाइम्स ऑफ इण्डिया के अतिरिक्त और कोई अंग्रेजी का अखबार उपलब्ध नहीं हो सका। कुछ दिनों तक हमने लोकवाणी और टाइम्स ऑफ इंडिया अखबार मंगाये मगर उनमें भूस्वामी संघ की कोई विशेष खबर न आने से उन्हें बंद करा दिया। मैंने नियमानुसार ता. 3–2–56 को ही

सुप्रिन्टैन्डैंट पुलिस टोंक को दरख्वास्त दी कि मुझे राष्ट्रदूत, वीरअर्जुन और नवयुग समाचार पत्र दिये जावें। बाद में तो मुझे अनुभव हो गया कि सुप्रिन्टैन्डैंट पुलिस को प्रार्थना पत्र देना व्यर्थ था। असल में यह पत्र यदि हम अपने पैसों से मंगाना चाहें तो सुप्रिन्टैन्डैंट को किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था। तीन दिन तक किसी भी प्रकार का कोई भी उत्तर न आने पर हमने तारीख 6–2–56 को सुप्रिन्टैन्डैन्ट को भूख हड़ताल का नोटिस दे दिया कि हम तारीख 8–2–56 से इस मौन के विरुद्ध भूख हड़ताल कर देंगे किन्तु उस समय पुलिस सुप्रिन्टैन्डैन्ट ने किसी बात की परवाह नहीं की । तारीख 9–2–56 को जब हमारी भूख हड़ताल का दूसरा दिन था, सुप्रि. पुलिस का एक पत्र जेलर ने बताया कि उसने यह मामला जिलाधीश के पास सरकार की आज्ञा प्राप्त करने के लिए भेज दिया है।

नियम 14–5 यह है कि सुप्रिन्टैन्डैंट पुलिस सिर्फ वही पत्र रोक सकता है जो हिंसा से सरकार को उलटने का प्रयास करता हो अथवा वैसी प्रेरणा देता हो, लेकिन राष्ट्रदूत, वीरअर्जुन,और नवयुग जैसे समाचार पत्रों के लिये पुलिस सुप्रि.का अपने अधिकार का प्रयोग न कर मेरा प्रार्थना पत्र आगे भेजना मुझे खला। मुझे यह महसूस हुआ कि पुलिस आई.जी. ने तो मुझसे मीठी मीठी बातें की और इस पुलिस अधिकारी को इस प्रकार अनोखा रवैया बर्तने के लिये संभवतः इशारा किया हो। इस पर मैंने तो 7–2–56 को ही आई.जी. पुलिस को पत्र लिखा जिसका उत्तर मुझे 23–3–56 को अर्थात डेढ माह बाद मिला कि सुप्रि.पुलिस ने तारीख 4–2–56 को ही पत्र भेज दिया था और उन समाचार पत्रों की स्वीकृति सरकार ने दी है।

तारीख 8–2–56 को जब डाक्टर भूखहड़ताल में मेरी हालत देखने आए तब संयोगवश ही बातचीत चली तो मैंने उन्हें कानून बताया कि समाचार पत्र धींगामस्ती में ही रोके जा रहे हैं। जेलर भी इस बात को मान गया और उसने मुझे फिर प्रार्थना पत्र देने को कहा। मैंने उसी दिन एक प्रार्थना पत्र जेलर को दिया कि उक्त तीनों समाचार पत्र मुझे अपने पैसों से दिलाने का प्रबन्ध किया जाय। तारीख 9–2–56 को जेलर ने बताया कि उसने आई.जी. जेल को समाचार पत्रों के मसले में सूचना दी थी जिसमें उन्होंने नवयुग तो स्वीकार कर लिया है किन्तु राष्ट्रदूत और वीरअर्जुन के लिए सरकार की आज्ञा के लिए लिखा है। बाद में मुझे मालूम हुआ कि नवयुग स्वीकृत सूची में था किन्तु जेलर को इस बात का ज्ञान नहीं था। जिलाधीश भी इसी दिन आए,उन्हें भी मैंने नियमावली भली भांति समझाई। वे भी मान गये कि हमारे निजी खर्च पर अखबार मंगाये जावेंगे तो उन्हें सरकार नहीं रोक सकती, किन्तु उन्होंने कहा कि मामला क्योंकि सरकार को भेज दिया गया है इसलिए कानून होते हुए भी अब हम उसमें अधिकार प्रयोग में नहीं

ला सकते,कारण कि कल सरकार की ओर से जाने क्या आ जाय और वे आफत में फँस जायें। कार्य–पालिका व न्यायपालिका का पृथक करण न होने का उस दिन मुझे पहली बार दुष्परिणाम अनुभव हुआ, जिला मजिस्ट्रेट की बात से यह स्पष्ट था किस प्रकार से यह मजिस्ट्रेट अपने वैधानिक अधिकारों के प्रयोग में सरकार से भय खाते हैं। नियम यह है कि यदि सुप्रिन्टैन्डैन्ट किसी कारण कोई समाचार पत्र अथवा पुस्तक रोकता है तो उसकी सूचना उसे जिला मजिस्ट्रेट के पास भेजनी होगी और जिलाधीश स्वयं निर्णय करेगा कि कौनसा समाचार पत्र रोका जाए और कौनसा नहीं लेकिन राजस्थान के इस 'मच्छ गलागल और सुणै न कोई सांभळे' में पुलिस सुप्रिन्टैन्डैंट व जिला मजिस्ट्रेट तो क्या डिप्टीजेलर तक के अधिकार स्वयं सरकार ने अपने हाथों में ले रखे हैं। और व्यवहारिक रूप से वे समस्त अधिकार सरकार के इशारों पर ही सम्बन्धित अधिकारी प्रयोग में लाते हैं। अधिकारियों की शुरू से यह धारणा रही है कि हम नजर बन्द लोग साधारण कैदियों से भी अधिक खतरनाक हैं और उन्हें आराम से रहने देना और संवैधानिक सुविधाएँ देना भी सरकार को नाराज करना है। उनकी धारणा में नियम जो सरकार ने पास किये हैं वे नजर बंदियों को सिर्फ बताने के लिये हैं न कि अधिकारियों के लिए व्यवहारिक रूप में प्रयोग में लाने के लिये। जब सब प्रकार से प्रयास करने के पश्चात भी और अपने पैसों से राष्ट्रदूत और वीर अर्जुन नहीं खरीद कर दिया गया तो मैंने भी दूसरे मार्ग से हल निकालने का विचार कर लिया।

सवाईसिंह के नाम से मंगाये गए पत्र लोकवाणी,धर्मयुग और टाइम्स ऑफ इंडिया ता. 9–2–56 से आने शुरू हो गये। ता.11–2–56 को जब मोहरसिंह वकील मुझसे मिलने के लिये आये थे तब उनको मैंने कह दिया कि जयपुर के भूस्वामी संघ कार्यालय को वे सूचित कर दें कि हमारे नाम से वीर अर्जुन और राष्ट्रदूत नियमित रूप से खरीद कर डाक द्वारा पोस्टल सर्टिफिकेट के द्वारा जेल के पते पर भेज दिया करें। सवाईसिंह के नाम से आने वाले सभी पत्र उसके जयपुर जाने पर बंद करवा दिये थे अतः उन दिनों मुझे नवयुग और जेल का पत्र हिन्दुस्तान मिला करता था। उन समाचार पत्रों में भी बहुत बार समाचार कटे हुए आते थे। कई बार ऐसे समाचार पत्रों को फेंका, वापिस किया। जेलर को इस विषय में समझाया कि निजी खर्च से आने वाले किसी समाचार पत्र के किसी भी कालम को काटने का उनका अधिकार नहीं है किन्तु जेलर जैसे कानून समझने की माद्दा नहीं रखता था अथवा जानबूझ कर कानून की अवहेलना किया करता था और हर दो तीन दिन बाद ऐसी परेशानी खड़ी कर दिया करता था।

वकील श्री मोहरसिंह ने हमारे आदेशानुसार जयपुर कार्यालय को सूचित

कर दिया था। इसलिए ता.15—2—56 से नियमित रूप से समाचार पत्र हमारे नाम से भेजे जाने लगे किन्तु हमें उनमें से एक भी अखबार नहीं मिला करता था। सारे समाचार पत्र पुलिस सुप्रिन्टैन्डैन्ट के पास भेज दिये जाते थे। भेजते वक्त जेलर लाल स्याही से स्वयं उन समाचार पत्रों पर निशान कर देता था और पुलिस अधिकारी उन समस्त समाचारों को कटवा देते थे। इतना होते हुए भी कटे हुए समाचार पत्र हमें नहीं दिये गए। ता.24—2—56 को हम समाचार पत्रों के लिए अन्तिम रूप से तय करके गये थे कि या तो जेलर मान जावे अन्यथा हम फिर भूख हड़ताल कर देंगे। मैंने उसे फिर कानून का हवाला देकर समझाया और कहा कि या तो वे हमें बिना कटिंग के अखबार दें अन्यथा सख्त कदम उठायेंगे, जिसकी रूप रेखा भी हमने बनाली है। आने वाली विषम परिस्थितियों का अनुमान लगा कर अथवा अन्य किसी सरकारी आज्ञा के कारण जेलर ने उस समय यह स्वीकार कर लिया कि नियमित रूप से जो समाचार पत्र आयेंगे वे हमें दिखा दिए जावेंगे।

हमने देखा कि हमारा काम बन जाता है तो हमें अधिकारियों को वैधानिक औपचारिकता में परेशान नहीं करना चाहिए किन्तु बाद में हमें यह अनुभव हुआ कि जेलर ने उनका उतना ही नाजायज लाभ उठाया। हमें उस दिन से अखबार तो मिल जाया करते थे लेकिन हमें भय था कि जिस दिन जेलर हमसे नाराज हुआ उसी दिन से हमारे अखबार बंद कर दिए जावेंगे और बाद में यह यही आधार लेगा कि उसने इस प्रकार अखबारों की व्यवस्था की ही नहीं। इसलिए जब वे समाचार पत्र मिला करते थे तो हम उनकी खबरों को संक्षेप में लिख लिया करते थे।

समाचार पत्रों का यह क्रम चलता रहा किन्तु ता.16—3—56 से अचानक उसमें गतिरोध उत्पन्न हो गया। घटना इस प्रकार हुई कि रजिस्ट्रार हाईकोर्ट से पत्र आया कि मैं यदि नजरबन्दी की आज्ञा के विरुद्ध कोई प्रतिवेदन करना चाहूँ तो एक सप्ताह के भीतर वैसा करदूं। यह पत्र अहलकार ने मुझे ता.8—3—56 को ही दिखा दिया था और उस पर मेरे हस्ताक्षर ले लिये थे किन्तु जेलर ने जयपुर से आने के बाद ता.16—3—56 को लिखित में मेरा उत्तर जानना चाहा। मैंने उसमें लिख दिया कि मुझे मेरे वकील से एकान्त में मिलने नहीं दिया इसलिए मैं कोई प्रतिवेदन नहीं कर सका। ऐसा मैं पहले ही रजिस्ट्रार को लिख चुका हूँ। इस उत्तर ने जेलर के आग लगा दी। वह वकील की मुलाकात की घटना को यथा संभव छिपाना चाहता था और मैं उसे बाहर निकालना चाहता था। स्थिति इस कदर आगे बढ़ गई कि उसके रोके भी यह तथ्य रुक नहीं पा रहा था। इसीलिए वह नाराज हो गया और इसके फलस्वरूप उसने हमारे समाचार पत्र रोक दिये। कुछ दिन तक हम यही सोचते रहे कि जयपुर से वे भेजे नहीं जा रहे हैं किन्तु जब

हमने हमारी आंखों से वे पत्र किसी वार्डर को पढ़ते हुए देखे तो हमें प्रतिक्रिया उत्पन्न करने की सूझी । ता.20—3—56 की शाम को मैंने उसे भूख—जल और वस्त्र हड़ताल का नोटिस वार्डर विजयसिंह की मार्फत रात्रि को भेजा और 21—3—56 से ही भूखहड़ताल आदि प्रारम्भ कर दिए। उस नोटिस में मैंने यह स्पष्ट लिख दिया था कि इतने दिन आप अखबार देते जा रहे थे और उनके कटिंग से पहले हम समाचार पढ़ लिया करते थे। वे सारे समाचार संक्षिप्त रूप से हमारे पास नोट किये हुए हैं। जेलर ने भरसक कोशिश की कि इस भूख—हड़ताल की बात बाहर न जावे इसलिये दिन भर वह हनीफखां हैडवार्डर के मार्फत समझौते की वार्ता चलाता रहा किन्तु हम इसी बात पर अड़े हुए थे कि जब तक समाचार पत्र नहीं मिलते तब तक भूख—हड़ताल नहीं तोड़ेंगे। हमने नारे भी लगाने शुरू किये। जिससे जेलर की नाराजगी बढ़ती ही गई।

तारीख 22—3—56 को मुझे कलैक्टर और जेलर की भयंकर साजिश का पता लगा जब कि जेलर ने कलैक्टर का वह पत्र मेरे पास भेजा जिसमें लिखा था कि तारीख 11—2—56 को मेरे वकील को मुझ से एकान्त में मिलने का अवसर दे दिया गया था इसलिए 500 रुपये के हर्जाने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। उस पत्र को देखकर मेरे तन बदन में आग लग गई। भूख हड़ताल पर यह मेरा दूसरा दिन था। पानी भी नहीं लिया था और रात भर वस्त्र का प्रयोग न करने के कारण सारी रात सर्दी में बुरी तरह ठिठुरता रहा किन्तु हिरण्यकश्यप समान मनुष्य रूप में फिरने वाले दैत्यों को मेरी अवस्था पर कुछ भी चिन्ता नहीं हुई। इस पर हलाहल झूठ का इतना नग्नता पूर्ण नृत्य देखकर मुझे भयंकर क्षोभ हुआ। मेरे वकील की अर्जी पर जेलर ने अपने हाथों से लिखा था कि एकान्त में मिलने की स्वीरकृति नहीं दी जा सकती क्योंकि ऐसी ही उनको आज्ञा है। इस पर भी इस प्रकार झूठ की ओट लेकर, न्याय का गला घोटकर मेरे बन्दी जीवन की सीमित परिस्थितियों व साधनों के अभाव का नाजायज लाभ उठाकर अपना मतलब गांठने की जो कुप्रवृति जेलर व कलैक्टर ने अपनाई थी उससे मैं बड़ा कुपित हुआ और बड़े जोर शोर से नारे लगाने शुरू किये। वैसे तो हम दो के नारे टोंक जिले की जेल में नक्कार खाने से तूती की आवाज थी किन्तु हमारे पास इसके सिवाय और कोई चारा नहीं था।

दोहर के समय डाक्टर आए। बड़ी वाद—विवाद की स्थिति के बाद जेलर ने पुनः उसे वे ही अखबार चुपके से देने का वादा किया और मैंने पुनः भूखहड़ताल तोड़ दी।

लेकिन मुझे खेद है कि उसके बाद भी वे अखबार मुझे लाकर नहीं दिये। इसी बीच आयुवानसिंहजी आ गये और सरकार से हो रही भूस्वामी संघ की बातचीत का अधिकारियों को आभास हो गया था अतः उस समय कलैक्टर

भी ता.23–3–56 को मुझ से मिले। उन्हें कानून समझाया और उन्होंने अखबार देने के लिये वचन दिया। यही कानून उन्हें मैं पहले भी एक बार समझा चुका था किन्तु उस समय उन्होंने यही कहा था कि यह उनके हाथ की बात नहीं थी और अब अचानक उसकी स्वीकृति देना इस बात को स्पष्ट करता था कि यह नम्रता सिर्फ हमारी और सरकार की बातचीत की परिस्थितियों के कारण ही उत्पन्न हुई। उस दिन के बाद हम जब तक टोंक जेल में रहे हमें नियमित रूप से जयपुर से आने वाले सभी समाचार पत्र मिल जाया करते थे। जब कभी वे पत्र नहीं आते थे तो राष्ट्रदूत हम बाजार से मंगवा लिया करते थे, लेकिन चाह कर भी हमें वीर अर्जुन बाजार से नहीं प्राप्त होता था। वह अखबार टोंक में अप्राप्य है। हमने उसे दो रुपये का मनिआर्डर वीरअर्जुन कार्यालय को भेजने का लिखा था किन्तु उसने वह मनीआर्डर भी अन्त तक नहीं भेजा।

समाचार पत्रों के लिये हमें जितनी यातना दी जा सकती थी उतनी मानसिक यातना जेल अधिकारियों ने दी। मैंने गृहमंत्री, आई.जी.पी.,आई.जी. जेल और कलैक्टर को यह बातें लिखी थी मगर किसी से भी मुझे संतोषजनक उत्तर नहीं मिला। जेल में किसी भी वस्तु का अभाव नहीं खटकता था क्योंकि हमने हमारा जीवन इस प्रकार ढाल रखा था कि सभी प्रकार की परिस्थितियों में हम प्रसन्नतापूर्वक जीवन निर्वाह कर सकते थे किन्तु खबरों का न आना हमें बहुत घबराहट पैदा करता था। जेलर इस बात को जानता था और इसीलिए उसने और कलैक्टर ने इस विषय में जितना कष्ट दे सकते थे,दिया। समाचार पत्र बहुत तुच्छ चीज है पर उसके लिए भी हमें दो बार भूखहड़ताल करनी पड़ी। कम से कम भी दस बार प्रार्थना पत्र भेजे होंगे पर अधिकारियों ने जिस तुच्छता, अनुदारता और असहिष्णुता का परिचय दिया उससे मैं तो समझता हूँ कि कोई भी प्रजातंत्रीय सरकार गौरवान्वित नहीं हो सकती। निश्चित नियम होते हुए भी उनकी सुविधाएँ हमें न मिले और फिर हमें यह कहा जाय कि आपके लिए हमारे पास विशेष आज्ञाएँ हैं–नियमों से परे हमारे आला अफसरों के हुकुम मानने पड़ते हैं। तो मैं तो बड़े खेद से यही कहूँगा कि इन बातों के लिए जो अफसर और मंत्री जिम्मेवार हैं वे प्रजातन्त्र के लिए बिलकुल अयोग्य हैं। इस प्रकार समाचार पत्रों के लिये हमें जो अन्याय पूर्ण व्यवहार का सामना करना पड़ा उसका साक्षी हमारा हृदय और ईश्वर है और मैं ईमानदारी से कहूँगा कि मैं अपने राजनैतिक शत्रुओं से ऐसा निम्नकोटि का व्यवहार अपने अफसरों और मातहतों से कराऊंगा उस दिन मैं अपना काला मुंह कर अपनी अनुदारता, अन्याय और असहिष्णुता के कारण चुल्लू भर पानी में डूब मरूंगा।

प्रकरण : चार

सुविधाएँ

नियमों में और कहने को यह कहा जा सकता है कि नजरबन्दियों को अनेक प्रकार की सुविधाएं होती हैं किन्तु सुविधाओं के लिए बने हुए नियम हमारे लिए वे न बने के समान थे। टोंक जेल में हमारे साथ जिस प्रकार का बर्ताव किया गया वैसा शायद ही किसी नजरबन्द के साथ किया गया हो। वैसे तो मैंने पहले ही लिखा है कि हमने जीवन को इस प्रकार के संस्कारों में ढ़ालकर अभ्यास कर रखा था कि किसी भी प्रकार की असुविधा से हम घबराने वाले नहीं थे, जो कुछ नियमों के अन्तर्गत सुविधाएं प्राप्त होनी चाहिये वे सभी हमें दी जाती तो हमारे लिए वह ऐसी आराम की चीजें बन जाती किन्तु हमें क्षोभ सिर्फ इस बात से था कि नियम होते हुए भी जेलर के रुख के साथ सुविधाएं भी घटती और बढ़ती रहती थी। ऊपर से तुर्रा यह कि जो भी जेलर के दोस्त जेल में आते वे हमारी इस अवस्था पर हंसते थे और कहते थे कि यह तो सरकार की नीति होती है। आपकी यदि सरकार होती तो आप भी बन्दियों के साथ ऐसा ही बर्ताव करते। अंग्रेज भी इसी प्रकार करते थे। उन जड़ मूर्खों को मैं यह कैसे समझाऊं कि कांग्रेसी अपने आपको अंग्रेजों के उत्तराधिकारी नहीं मानते। वे भारत में गणतन्त्रीय प्रजातन्त्र का दावा करते हैं, इसलिए जो नियम बनाए हैं वे हमारी सुविधाओं के लिए हैं। अंग्रेजों के राज्य में जो नजरबन्द होते थे उन्हें जिस प्रकार की सुविधाएं दी जाती थीं उनसे हम भली प्रकार परिचित हैं। इतना तो कम से कम स्पष्ट ही था कि नियमों का वे पालन किया करते थे। मुझे तो बड़ा खेद हुआ कि गृहमंत्री ने एक दिन विधानसभा में यह कहा कि तनसिंह को टोंक जेल में रखा गया है और 'ए' क्लास दी गई जबकि कोई भी वहाँ आकर देखता तो हमें 'सी' क्लास से भी गई बीती क्लास दी हुई थी।

भोजन ही जीवन में महत्त्वपूर्ण वस्तु नहीं है। मनुष्य केवल भोजन के लिए ही जीवित नहीं रहता इसलिए यदि साधारण बन्दियों से कुछ अच्छी किस्म का भोजन दे दिया जाय तो उसे ही केवल हम सुविधाएँ नहीं कह सकते। सुविधाएँ वही हैं जो बन्दी जीवन को सर्वांगीण रूप से आवृत करती हों। अब कतिपय सुविधाओं का वर्णन सुनिये।

(क) पत्र व्यवहार

नियमों के अनुसार पत्र व्यवहार के सम्बन्ध में सुविधा थी कि हम सप्ताह में चार पत्र लिख सकते थे और जितने ही पत्र हो सकते थे उतने ही प्राप्त कर सकते थे किन्तु हमने प्रारम्भ के दो हफ्तों तक ही इस सुविधा का उपयोग किया। मेरे आने के पहले सवाईसिंह ने कई पत्र भेजे थे जिनका सैन्सर स्वयं जेलर कर लिया करता था और पत्र भेज दिया करता था किन्तु मेरे आने के बाद उसने सभी पत्र आई.जी. पुलिस के पास भेजने शुरू किये। यद्यपि मेरे उन पत्रों में कुछ भी नहीं था किन्तु सैंसरशिप का जो चक्कर डाला उससे पत्र बहुत ही अर्से के बाद सम्बन्धित व्यक्तियों के पास पहुंचे। बिरला कालेज पिलानी, जहाँ मैंने चार वर्ष विद्याध्ययन किया था,के पहले के प्रिन्सीपल श्री शुकदेव पाएडे को राष्ट्रपति के द्वारा पद्मश्री की उपाधि से विभूषित करने पर मैंने एक बधाई का पत्र लिखा था। वह लगभग 25 दिन बाद उनके पास पहुंचा। मेरे घर भेजा जाने वाला साधारण समाचारों का पत्र तो बिलकुल ही नहीं पहुंचा। वकील को सिर्फ बुलाने के लिए पत्र भेजा था वह 27 दिन में पहुंचा और तो और स्वयं मुख्यमन्त्री श्री सुखाड़िया को भेजा गया पत्र 12 दिन बाद उन्हें मिला। एक पत्र मैंने राजस्थान के उपमन्त्री को उसके उपमन्त्री बनने पर बधाई के स्वरूप लिखा था और उसके सिवाय कुछ भी नहीं लिखा– वह पत्र भी लगभग 24 रोज बाद उन्हें मिला।

नियमों में सुविधा दी हुई थी कि हम पत्र लिखें किन्तु व्यवहारिक रूप में वे पत्र यदि पहुंचने में बीस–पच्चीस दिन लगा दें तो यही कहा जा सकता है कि यह सुविधा एक हाथ से दी जाकर दूसरे हाथ से ली जाने का कुचक्र है। इस प्रकार की धांधली का जब मुझे ज्ञात हुआ तो मैंने एक भी पत्र नहीं लिखा। सुखाड़िया जी से जब पत्र आते थे तो आने वाले पत्र के साथ ही पत्र वापस भेज दिया करता था। बाद में जो भी सुखाड़ियाजी को पत्र भेजा जाता था उसे पहुंचाने में अवश्य ही शीघ्रता की जाती थी।

जिन पत्रों के विषय में नियमों का उल्लेख यह है कि वे सीधे भेजे जावें वे पत्र भी जेलर आई.जी. जेल के मार्फत भेजता था। उदाहरणार्थ मैंने एक प्रार्थना पत्र जिला जज बालोतरा को भेजा था जिसमें मैंने निवेदन किया कि विधि व्यवसाय के प्रमाण पत्र का नवीनीकरण नहीं करा सकता अतः उसके लिए और समय दिया जावे। ऐसे पत्र के लिए नियम 212 के प्रावधान के अन्तर्गत यह निर्देशन किया हुआ है कि वे पत्र सीधे भेजे जावें। यह भी नहीं कि जेलर जेल के नियमों की मंशा का पालन करता था, बल्कि कभी–कभी

तो नियमों के सर्वथा विरुद्ध आचरण करता था। मैंने बंगलौर से एक पुस्तक मंगाई थी उसके लिए उसने मेरा पत्र बिना पुलिस सैंसर के भेज दिया। पुस्तकों के लिए यह नियम है कि वे पुलिस सैंसर के बाद नजरबन्द को मिलनी चाहिए किन्तु उसे न तो नियमों का ध्यान था और न कभी नियम पढ़ता था। इसलिए जिस समय जिस मूड में वह होता था उस समय वही हमारे लिये नियम था, इसलिए नियमानुकूल सुविधा प्राप्ति के लिए हमें उसे प्रसन्न रखना पड़ता था। इसी कारण कभी–कभी हम महसूस करते थे कि जेल हमारी कार्यवाहियों पर नियन्त्रण करने के साथ–साथ गुलामी करने का दुर्भाग्यपूर्ण अवसर हो गया था। एक बार इन्द्रसिंह अखबार जमा कराने आया तो उसने जमा करने से इनकार कर दिया और एक बार श्री हणुवन्तसिंह वकील कई पुस्तकें लेकर आए तो वे सारी पुस्तकें बिना पुलिस के पास भेजे ही उसने हमें दे दी। यह प्रकट करता है कि उस पर नियमों का बिलकुल ही अंकुश नहीं था अर्थात वह बिलकुल निरंकुश था।

(ख) औषधि की सुविधाएँ

मैंने किसी समाचार पत्र में पढ़ा था कि गोआ में सत्याग्रहियों को औषधि निजी दामों पर खरीदनी पड़ती है। ऐसा किसी संसद सदस्य ने संसद में कहा था किन्तु उन्हें क्या मालूम कि राजस्थान में भी एक ऐसी जेल है जहाँ भूस्वामियों को भी गोआ के सत्याग्रही माना जाता है। बिना मुकदमा चलाए अनिश्चित काल के लिए किसी व्यक्ति को नजरबन्द किया जाय और वैसी अवस्था में वह अपने लिए कुछ भी नहीं कमा सकता हो, उस पर बन्दी को बीमारी की अवस्था में दवाई घर के दामों से खरीदनी पड़े तो यह प्रजातन्त्रीय सरकार के लिए कितनी शर्म की बात है। डाक्टर ने मेरे सात इन्जैक्शन लगाए थे। बीमारी यह थी कि कैलशियम की कमी होने के कारण शरीर में रक्त अशुद्ध हो गया था जिसका मैं समझाता हूँ कि जेल भी एक कारण था किन्तु उसके लिए जेलर सरकारी दाम खर्च करने को तैयार नहीं हुआ। मैंने लिखित रूप में प्रार्थना पत्र दिया कि जेल डाक्टर द्वारा दी जाने वाली औषधियां सरकारी कीमत पर मिलनी चाहिये किन्तु सरकार यदि किसी हालत में मेरे इन्जैक्शन के लिये खर्च करने को तैयार नहीं है तो बीमारी की हालत देखते हुए मुझे वह दवाई निजी दामों पर दी जावे। मेरे लिखित प्रार्थना पत्र पर ही निजी दामों पर दवाई मिली। मेरी बीमारी ऐसी भी नहीं थी कि वह बहुत काल से चली आ रही हो और जिसके कारण कोई नुकसान नहीं हो। यह भी नहीं कि इन्जैक्शन बड़ी कीमत के थे और डाक्टर भी यह

सब जानता था। एक दिन मैंने डाक्टर को शिकायत भी की कि निजी दामों पर मुझे दवाई मिलना एक बहुत बुरी मिसाल होगी किन्तु उन्होंने इसका आधार बताया कि अस्पताल में साधारणतया जो दवाइयाँ स्टॉक में होती हैं उनके अतिरिक्त दवाई के लिए मरीज को अपने दाम देने पड़ते हैं लेकिन मुझे खेद है कि डाक्टर को एक आजाद और नजरबन्द व्यक्ति में कोई अन्तर नहीं लगता।

एक ओर तो इस प्रकार हमें अपने दाम दवाइयों के लिए खर्च करने पड़ते हैं और दूसरी ओर दवाइयों का जिस प्रकार दुरुपयोग किया जाता है–इसका भी एक दृष्टान्त सुन लीजिये। टोंक जेल में एक डिस्पैंसरी है जिसका कम्पाउण्डर स्थायी कर्मचारी है। शहर से डाक्टर सप्ताह में एकाध बार निरीक्षण कर जाता है। मेरे जेल में आने के एक आध दिन पहले ही कम्पाउण्डर बिना छुट्टी घर भाग गया था। उसके जाने पर दवाइयों के स्टाक पर परचे लगा दिये थे। पुलिस ने वापिस आने पर उस पर मुकदमा चलाना चाहा। साइकिल की चोरी आदि का दोष भी लगाया गया किन्तु सिद्ध न होने से चालान नहीं किया गया। नियमानुसार उसे गिरफ्तार नहीं किया गया था, उसे कोतवाली में ही रखा गया था। ता. 4–2–56 को उक्त कम्पाउण्डर एक पुलिस मैन की निगरानी में डाक्टर के साथ जेल लाया गया और डिस्पैंसरी की दवाइयों को चैक भी किया गया। जो मौजूदा स्टाक था उस पर डाक्टर ने हस्ताक्षर कर दिए और कालीप्रसाद नामक एक कम्पाउण्डर को उसकी जगह पर नियुक्त किया। उसने चैक किया तो बहुत सी दवाइयों का अभाव पाया। कुछ दिनों बाद जेलर की सिफारिश पर डाक्टर ने कम्पाउण्डर को फिर नौकरी पर ले लिया। कालीप्रसाद ने जेलर को बताया कि दवाइयां स्टाक में जो बताई जाती हैं उससे बहुत कम हैं। दूसरी दवाइयों का तो मुझे याद नहीं किन्तु सल्फागोनोडीन की टिकिया बहुत कम पड़ती थी। जिसमें 200 टिकिया जेलर ने अपने घर से लाकर जमा करवाई। यह स्पष्ट करता है कि राजस्थान में भ्रष्टाचार की सीमा कहाँ तक बढ़ती जा रही है। यह शिकायत मैंने डाक्टर को भी की थी किन्तु उसका क्या हुआ उसका वही जाने।

(ग) मन बहलाने के साधन

सभी आधुनिक जेलों में मन बहलाव के कई साधन होते हैं। इन साधनों में पुस्तकालय,समाचार पत्र, रेडियो और खेलकूद आदि होते हैं। समाचार पत्रों के नाम पर सिर्फ हिन्दुस्तान ही आता है। अन्य समाचार पत्रों के लिए अलग प्रकरण

दिया जा चुका है। पुस्तकालय में कुछ पुराने जमाने के कल्याण के साधारण अंक और आत्मज्योति के अंक थे। पुस्तकें भी कुछ नहीं हैं। मुझे ज्ञात हुआ कि यह जेल बच्चों के लिए परिवर्तित की जा रही है और यही व्यक्ति वहां के जेलर बनेंगे, यदि यह सही है तो वहां की लाइब्रेरी के लिए किसी कबाड़ी की दुकान पर ही भाव जोख हुआ करेंगे। रेडियो जरूर है। हमें रेडियो सुनने के लिए दफ्तर में आने की इजाजत थी और वहाँ जाकर सुना भी करते थे क्योंकि लाउडस्पीकर खराब हो रहा था किन्तु वह रेडियो सुनने की सुविधा भी जेलर की हम पर मेहरबानी के साथ ही घटा बढ़ा करती थी। 15–20 दिन तक उसने हमें दफ्तर में आने ही नहीं दिया और हम अपने वार्ड में बैठे ही सुना करते थे किन्तु वह कभी भी समाचार नहीं सुनाया करता था और सिनेमा के फिल्मी गाने सुनने पड़ते थे जिन्हें अनिच्छा होने पर भी न सुनने को कान बन्द करने के सिवाय और कोई साधन नहीं था।

नियमों में यह बात आई हुई है कि नजरबन्दियों की संख्या यदि पर्याप्त है तो बालीबाल की व्यवस्था की जा सकती है और वे बैडमिंटन भी खेल सकते हैं। हम दोनों बैडमिंटन का खेल खेल सकते थे किन्तु जब कभी खेल की बात चलती थी तो जेलर उसे टालने की कोशिश करता था। आखिर हमने लिखित में बैडमिंटन सैट मंगाने की प्रार्थना भी की किन्तु अन्य प्रार्थना पत्रों की भांति वह भी खटाई में डाल दी गई और उसकी कोई व्यवस्था नहीं की गई। इस प्रकार जो नियमानुसार सुविधाएं दी जाने को हैं वे केवल कागजों में रह जाती हैं। व्यवहारिक रूप में वे सुविधाएं राजस्थान की किसी जेल में नहीं हैं। थोड़ी बहुत सुविधाएं जयपुर जेल में अवश्य हैं।

(घ) विभिन्न सुविधाएँ

हमारे निवास के लिए टोंक में एक विशेष वार्ड था जिसमें एक ही कोठरी थी। कोठरी में दो आदमी आसानी से रह सकते थे। कोठरी के चारों ओर दीवार का हत्ता था। हत्ता एक बालीबाल के फील्ड जितना था। रात्रि में वार्ड की कोठरी का ताला बन्द कर दिया जाता था अतः हमको साढ़े पाँच बजे से पहले ही बन्द हो जाना पड़ता था और सुबह साढ़े छः बजे खुलते थे। इस प्रकार 13 घण्टे तक हमें अपनी कोठरी में ही बन्द रहना पड़ता था और दिन को उस बाड़े में रहना पड़ता था, जो बालीबाल के फील्ड से अधिक बड़ा नहीं था किन्तु धीरे–धीरे हम लोग बाहर भी निकलने लगे और बगीचे में भी घूमते थे। जेलर जब भी नाराज होता था तो हनीफ खां को हुकुम देता था कि हम लोगों को बगीचे में न बैठने दिया जाय किन्तु हम परवाह नहीं करते थे और बैठे रहते थे। जेलर हमें विशेष नाराज भी नहीं करना चाहता था। ता.

10–3–56 से हमने जेलर को कानून बताकर बाहर सोना शुरू किया और इस प्रकार तेरह घण्टे तक 14 वर्ग फीट की कोठरी से छुटकारा मिला। उस दिन के बाद हमने कोठरी के ताला नहीं लगने दिया।

हमने जब ता. 6.2.56 को भूख हड़ताल का नोटिस दिया तब उसने हमें अलग–अलग रखे जाने की इच्छा प्रकट की। हमने इनकार कर दिया। उसने हमें बताया कि ऐसा उसको डी.एम. का हुकुम है और वे खुद लाचार हैं। सवाईसिंह ने ता. 7.2.56 को मेरी सहानुभूति में भूख हड़ताल करने का नोटिस दे दिया, इस प्रकार जेलर ने कहा कि अब हमें मजबूरन अलग करना पड़ेगा। मैंने पहले तो इनकार किया फिर उसने बहुत कहा और लगभग गिड़गिड़ाने लगा, तो हमने बिना विरोध किए अलग–अलग रहना स्वीकार कर लिया। हम ता.8.2.56 से ही भूखहड़ताल करने वाले थे किन्तु अलग–अलग करने के कारण हमने ता.7.2.56 से ही भूखहड़ताल शुरू कर दी। आम तौर पर ऐसा होता है कि भूखहड़ताल करने वाले को उन साथियों से अलग कर दिया जाता है जो भूखहड़ताल पर नहीं हैं किन्तु इस जेलर ने हम दोनों को सिर्फ मानसिक क्लेश देने के कारण अलग–अलग कर दिया जब कि हम दोनों भूखहड़ताल पर थे। नियम यह भी है कि नजरबन्द किसी एक ही जेल में अलग–अलग हों तो वे दिन में आपस में स्वतन्त्रतापूर्वक मिल सकते हैं किन्तु हमको ता. 7.2.56 व 8.2.56 को आपस में नहीं मिलने दिया गया, इस प्रकार हम दोनों एक तरह की कालकोठरी में रहे। हमारे पास सिर्फ एक ही कैदी खाना बनाने के लिए रहता था और भूखहड़ताल होने पर वह भी हमसे अलग कर दिया जाता था। जब भी भूखहड़ताल हमने की तब हमेशा अकेले रहना पड़ता था और क्योंकि साधारण कैदी नहीं आ सकते थे इसलिए न तो दतून ही आते थे और न स्नान के लिए पानी ही भरा जाता था।

मैं सिगरेट पीने का आदी था। नियमानुसार हमें अपने दामों से सिगरेट पीने की सुविधा होती है किन्तु प्रारम्भ में तो जैसा कहा जाता उतनी सिगरेट मिल जाया करती थी किन्तु द्वितीय भूखहड़ताल के बाद सिगरेट हमें दिन में एक पैकेट ही मिलता था और वह खर्च होने पर दूसरा दफ्तर से मंगाना पड़ता था। हमें एक बार यह भी कहा गया कि सिगरेट हमारे सामने ही पी जावे। ऐसी अपमानजनक स्थिति से हमें न पीना ही स्वीकार था। निजी दामों पर पीने की सिगरेट के लिए इस प्रकार बन्दिश लगाने की धमकियां कितने ओछेपन की परिचायक हैं यह पाठक भली–भांति जान सकते हैं।

जो सामान नियमानुसार हमें फर्नीचर के रूप में मिलना चाहिए उससे बहुत ही नगण्य चीजें हमें मिली थी। मच्छरदानी के लिए हम तरसते ही रहे। आखिर ता.22.3.56 को मुझे एक मच्छरदानी मिली थी किन्तु सवाईसिंह तो अन्त तक मच्छरों व मक्खियों का शिकार बनता रहा। लिखने के लिए मेज मिलनी चाहिए थी किन्तु हमें एक डैस्क दी गई जो पुराने जमाने के पुलिस मुंशी और आजकल के अर्जीनवीस काम में लाते हैं। दो तकिए और चार खोले प्रत्येक व्यक्ति को मिलने चाहिए किन्तु बहुत दिनों बाद एक–एक तकिया और 2 खोल दी गई। यदि इसी प्रकार की छोटी–छोटी वस्तुओं को गिनावें तो उसके लिए बहुत अधिक स्थान की आवश्यकता होगी। यहां इन बातों को देने का मेरा अभिप्राय यह है कि गृहमन्त्री ने एक दिन विधान सभा में मेरे लिए कहा था कि मुझे टोंक जेल में 'ए' क्लास दिया गया है इसलिए राजस्थान सरकार का जो 'ए' क्लास का स्तर है उसे ही मुझे प्रकट करना था।

प्रकरण : पाँच

भूख-हड़तालें

टोंक (जेल) में रहते हुए हमने तीन बार भूख् हड़तालें की। पहली भूख हड़ताल ता.7.2.56 को प्रारम्भ की और ता.8.2.56 को रात्रि के एक बजे तोड़ी। कहानी इस प्रकार है कि ता.3.2.56 को ही मैंने सुप्रिन्टैन्डैन्ट पुलिस टोंक को राष्ट्रदूत,नवयुग और वीरअर्जुन अखबारों के लिए लिखा था। मैंने उसमें यह स्पष्ट लिखा था कि यह अखबार मैं अपने खर्चे से मंगाना चाहता हूँ। इस प्रार्थना पत्र का तारीख 6.2.56 तक कोई उत्तर नहीं आने से हमने तारीख 6.2.56 को सुप्रिन्टैन्डैन्ट पुलिस को भूख हड़ताल का नोटिस दे दिया कि यदि हमें समाचार पत्र नहीं मिले तो मैं तारीख 8.2.56 से भूखहड़ताल कर दूंगा। तारीख 7.2.56 को श्री सवाई सिंह ने मेरी सहानुभूति में भूख हड़ताल का नोटिस जेलर को दिया। जब तारीख 6.2.56 को मैंने नोटिस दिया,तब जेलर ने हनीफखां को भेजा कि उन्हें अलग–अलग कर दो,श्री सवाईसिंह को अस्पताल में भेज दो और मुझे वार्ड में भेज दो। हमने अलग–अलग होने से इनकार कर दिया। शाम को जेलर आया। तारीख 6.2.56 तक जेलर का व्यवहार हमारे साथ नम्र था, उसने हमें बताया कि वह खुद ऐसा करने में मजबूर है क्योंकि उसे जिलाधीश का ऐसा करने का हुक्म है। हमने उसे कहा कि हम उसके कहने पर बिना हुज्जत के ही अलग–अलग चले जावेंगे किन्तु बाद में हम हमारी सभी सुविधाएँ मांगेंगे जो नियमानुसार हमें प्राप्त होनी चाहिए। जेलर जानता था कि वे सारी सुविधाएँ टोंक में अप्राप्य हैं और खामोख्वाह एक परेशानी होगी इसलिए उस दिन तो वह चला गया। किन्तु दूसरे ही दिन ता.7.2.56 को जब श्री सवाईसिंह ने मेरी सहानुभूति में भूख हड़ताल का नोटिस दिया तो उसने कहा अब तो हमें मजबूरन अलग करना पड़ेगा। मैंने उसे पिछले दिन वाली शर्तें कह सुनाई तो उसने स्वीकार कर लिया। उसी वक्त जेलर के आदेशानुसार श्रीसवाईसिंह को अस्पताल में रखा गया और मुझे मेरे वार्ड में। मैंने इसी कृत्य के विरोधस्वरूप उसी वक्त से भूख हड़ताल प्रारम्भ कर दी। दिन को हमको ताले में रखा गया और परस्पर मिलने नहीं दिया गया। इस प्रकार दोनों को एक प्रकार की काल कोठरियों की सजा दी गई थी। दोपहर को मैंने सरकारी कपड़े और सामान के लिए दरख्वास्त दी और निजी कपड़े उतार दिये। इस पर जेलर ने बिछौने के रूप

में एक लाल रजाई, एक दरी,एक चादर,ओढ़ने के लिए दो कम्बल और पहनने के लिए एक कमीज व एक पाजामा दिया। तकिया एक दिया जिसमें रूई के बजाय कैदियों के फटे पुराने चिथड़े थे। मैंने सब कपड़ों को स्वीकार कर लिया। किन्तु मेट ने कहा कि मैं अपने निजी कपड़े जमा करा दूं। मैंने जवाब दिया कि या तो मुझे नियमानुसार पूरे कपड़े दिये जायें वर्ना मैं निजी कपड़े नहीं दूंगा। तब वह सरकारी कपड़े लेकर चला गया और दो घंटे बाद वही कपड़े लेकर वापिस आ गया किन्तु मैंने न उन कपड़ों को स्वीकार किया और न निजी कपड़ों को। अचानक मुझे यही विचार आया कि भूख हड़ताल से यदि शरीर को कष्ट देना है तो सर्दियों में कपड़े न पहनना, गर्मियों में धूप में खड़े रहना और बरसात में पानी में भीगते रहना भी एक तपस्या है। इसलिए मैंने निश्चय कर लिया कि जब तक श्री सवाईसिंह को मेरे साथ नहीं कर दिया जाता मैं कपड़े नहीं पहन सकता ।

शाम के समय जेलर दल बल सहित मेरे बैरक में आया। उसके साथ छः अन्य व्यक्ति थे जिसमें दोनों हैडवार्डर, अमीर बेग नामक कन्विक्ट वार्डर, वार्डस नं. 781,725 व 984 थे। जेलर ने आकर कहा कि मैं तलाशी लूंगा, मैंने कहा कि शौक से लीजिए किन्तु जो तलाशी ले वह स्वयं अपनी तलाशी पहले दे। दोनों हैडवार्डरों की मैंने तलाशी ली। एक वार्डर भी मेरी कोठरी में घुसने लगा। उसकी तलाशी ली तो उसकी जेब में पैसे थे। मैंने उसे बाहर निकाल दिया। सभी वार्डरों के हाथों में लाठियां थी। मैंने जेलर को कहा कि उसने मेरा अत्यन्त अपमान किया है तलाशी के वक्त हैडवार्डर के सिवाय उससे किसी नीची श्रेणी के कर्मचारी को नहीं रहना चाहिए किन्तु उसने जवाब हिन्दी में देते हुए कहा कि आपकी जिस्मानी तलाशी नहीं ली जा रही है जब वह ली जायेगी तब इनको बाहर निकाल दिया जायगा। मेरे सामने और कोई चारा नहीं था कि या तो मैं इस निरंकुश अराजकता और अन्याय के विरुद्ध बल प्रयोग करूं अथवा उसे सहन करूँ, लेकिन मैंने बल प्रयोग के लिए इसे पहली ऐसी घटना मानकर उचित अवसर नहीं समझा।

तलाशी के समय सेफ्टी रेजर वह ले जाने लगा और कहा कि जब कभी हजामत बनानी हो तो दफ्तर में आकर बना लेना। उसको नियम बताया कि मैं सेफ्टी रेजर रख सकता हूँ किन्तु उसी नियम में आगे लिखा है कि वेपन इन्स्ट्रुमेण्ट नहीं रखा जा सकता। जेलर ने कहा कि सेफ्टी रेजर है इसलिए यह आपके पास नहीं रह सकता। यह बात सुन कर मुझे इतना क्षोभ हुआ कि राजस्थान सरकार प्रतिष्ठित नजरबंद व्यक्तियों से व्यवहार करने के लिए किस स्तर और योग्यता के आदमी नौकरियों पर रखती है। मैंने उसे समझाया कि वेपन इन्स्ट्रुमेण्ट का मतलब रेजर नहीं बल्कि हुंडी,

बिल,चैक,वगैरह होते हैं तब जाकर उसने मेरा पिंड छोड़ा और साथ ही साथ मैंने भी हजामत बनाना छोड़ दिया।

रात को फिर वह मेरे पास आया और कहा कि मेरी गलती हो गई और रात को बैरक खोलना ठीक नहीं सुबह मैं श्री सवाईसिंह को आपके साथ करने का वचन देता हूँ। इस बात पर मैंने विश्वास कर मैंने कपड़े पहन लिए किन्तु दूसरे दिन सुबह हमारे दोनों के ताले बंद रखे। कैदियों के सुधार की डींग हांकने वाले इस प्रकार के तुच्छ विश्वासघात करते रहें तो यह स्पष्ट प्रकट करता है कि आने वाली विषम परिस्थितियों का मुकाबला करने का आत्मबल न होने के कारण समय पर झूठ बोलकर काम निकालना किसी सुधारक का आदर्श नहीं बन सकता। अस्तु मैंने तो उस दिन तारीख 8.2.56 को फिर लज्जा ढकने के अतिरिक्त सभी कपड़े फेंक दिये।

दोपहर को डाक्टर आए उनको मैंने बताया कि समाचार पत्रों के लिए कानून की अवहेलना की जाकर हमें उनसे वंचित रखा जा रहा है। शाम के वक्त फिर जेलर आया किन्तु मैंने कपड़े नहीं पहन रखे थे। सर्दी बहुत पड़ रही थी और मैं सर्दी से कांप रहा था। बैरक बंद होने के बाद वह मेरे पास आया और कहा कि मैं लाचार हूँ और साथ ही साथ बेबस भी। मुझे जिलाधीश ने धमकी दी है कि नौकरी करनी है कि नहीं। यदि नौकरी करनी हैं तो उनको अलग रखो। उस समय वह चला गया और रात को वह फिर वापिस आया। मैं बुरी तरह से ठिठुर रहा था, उसकी सूरत रूआंसी हो गई और मुझे पूछा कि आप पहले कभी दफा 124 ए के अन्तर्गत गिरफ्तार हुए हैं और क्या गिरफ्तारी की मंजूरी नहीं ली गई थी। मुझे आश्चर्य हुआ कि यह चीज वह कैसे जान गया और इस समय उस बात के पूछने का क्या तात्पर्य है अन्ततोगत्वा मैंने उसकी जिज्ञासा को मिटाया तो उसने मुझ से सलाह मांगी कि अब मैं क्या करूं, मैंने उसे सलाह दी कि तुम इसी वक्त लिखित में एक पत्र जिला मजिस्ट्रेट को भेजो कि सर्दी बहुत पड़ रही है और आपके जबानी हुक्म के अनुसार मैंने दोनों को पृथक कर दिया है। अब भी यदि आप चाहते हैं कि ऐसी सर्दी के बावजूद भी उन्हें अलग रखा जाय तो कृपया उत्तर दें। उसने वैसा ही लिखा किन्तु जिलाधीश ने कोई लिखित में उत्तर नहीं दिया और टेलीफोन पर ही कहा कि ऐसी बात है तो उनको शामिल कर दो। रात को एक बजे बैरक खोलकर हमको शामिल कर दिया गया और हमने कपड़े पहन लिए। हमारे आपस में समझने के बाद जेलर ने हमें विश्वास दिलाया कि कल मैं समाचार पत्र दे दूंगा और आप लोग खाना खा लीजिए। इस पर रात्रि को हमने चाय पीकर भूख हड़ताल तोड़ दी।

दूसरी भूख हड़ताल का नोटिस ता.20.3.56 को रात्रि को दिया। इसका

कारण था कि जेलर हमको प्राईवेटली समाचार पत्र दे दिया करता था और उसके बाद में उसका सैन्सरशिप होता था किन्तु ता.17.3.56 को नवयुग न मिलने और दूसरे दिन दोनों अखबारों का एक साथ आने पर जब हमने पुराना अखबार स्वीकार नहीं किया और उसी दिन वकील से मुलाकात न होने के कारण एडवाईजरी बोर्ड को भी प्रतिवेदन न करने के कारण लिखित रूप में प्राकट्य होने से जेलर नाराज हो गया और उसने उसी दिन से समाचार पत्र देना बंद कर दिया। ता. 20.3.56 को जो नोटिस मैंने दिया उसमें लिख दिया कि न तो मैं भोजन करूंगा, न पानी पिऊंगा और न औषधि अथवा वस्त्र धारण करूंगा। उस नोटिस के अनुसार ता.21.3.56 को भूखहड़ताल प्रारम्भ कर दी किन्तु जेलर ने कहा कि मुझे कोई नोटिस ही नहीं मिला है, इस पर उसी दिन कोई मैजिस्ट्रेट सनाख्ती की परेड के लिए आया था उसी समय उसकी ही उपस्थिति में जेलर को मैंने दूसरा नोटिस दिया। जेलर ने मेरी इस भूख हड़ताल की कोई परवाह नहीं की। डाक्टर को भी नहीं बुलाया और जहां तक मेरा अन्दाज है उस दिन उसने नोटिस के सही तथ्य किसी को प्रकट भी नहीं किए थे। नोटिस में मैंने साफ लिख दिया था कि इतने दिन तक आप हमें समाचार पत्रादि दिया करते थे उसका प्रमाण भी हमारे पास है कि हमने हमारी डायरी में संक्षिप्त रूप से समाचार लिख दिये थे। शाम को वह हैड वार्डर के साथ आया और कहा कि कल अखबार दे दूंगा किन्तु मैं अपनी बात पर अड़ा रहा। दिन भर मैंने पानी नहीं पिया था और न वस्त्र ही पहने। रात्रि को भी मैंने कोई कपड़ा नहीं ओढ़ा। रात्रि को वर्षा हुई और सर्दी भी बढ़ गई किन्तु रात भर ठिठुरते रहने पर भी उस माई के लाल के कान पर जूं तक नहीं रेंगी। दूसरे दिन सुबह उसने मुझे जिलाधीश की आज्ञा बताई कि वकील की मुलाकात नियमानुसार करा दी गई थी। यह सूचना हलाहल झूठ थी कि मुझे भी रोष के साथ यह स्पष्ट अनुभव हुआ कि यहाँ के सरकारी कर्मचारियों ने मेरे खिलाफ भरपूर षडयन्त्र कर रखा है। मैंने इन्सपैक्टर जनरल ऑफ प्रिजन्स से 500 रुपये का हरजाना मांगा था कि मुझे वकील से नियमानुसार मिलने नहीं दिया गया किन्तु मैंने ऐसी किसी बात की मांग कलैक्टर से नहीं की थी किन्तु जिला मजिस्ट्रेट के नाम से आई हुई सूचना जिसमें हरजाने का जिक्र आए तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। यदि जिला मजिस्ट्रेट ने जेलर अथवा किसी सरकारी आज्ञा से कोई जांच भी की थी तो उसे चाहिए था कि मुझे या मेरे उस वकील को अपने पक्ष की बात और शहादत के लिए मौका देते किन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ और इकतरफा फैसला दे दिया।

एक तो पिछले दिन से भूख हड़ताल और पानी के साथ—साथ वस्त्र भी ग्रहण नहीं किए थे जिस पर इस प्रकार षडयन्त्र भरा पत्र मेरे पास भेजना, मैं तो यही समझता हूँ कि जेल की सीमित परिस्थितियों में मेरी स्थिति का नाजायज फायदा

उठा कर जो मानसिक कष्ट दिये जाने का नापाक,शर्मनाक और बेहद पशुता भरा रवैया बनाया गया था उसके पीछे राजनैतिक दृष्टिकोण ही था। उस दिन हमने नारे लगाए जो जेलर के खिलाफ थे जिससे जेलर और भी नाराज हो गया। दोपहर को डाक्टर बुलाया गया। डाक्टर गार्ड के साथ आया, मैंने उससे मिलने से इनकार किया कि गार्ड के साथ आने वाले किसी व्यक्ति से मैं नहीं मिलूंगा क्योंकि यह मेरी तोहीन है। इस पर डाक्टर ने गार्ड को हट जाने को कहा किन्तु वह नहीं हटा। तब डाक्टर मुझे बैरक में ले गया जहाँ बातें शुरू हुई ही थी कि बाहर हल्ला सुनाई दिया। मैंने बाहर आकर कहा कि हल्ला मत मचाओ अथवा कुछ दूर चले जाओ ताकि मैं और डाक्टर बातें करें। वापिस आकर बैठा ही था कि फिर हल्ला शुरू हुआ और इस बार कुछ उग्र था। बाहर आकर देखा तो श्री सवाईसिंह नजर आये जिसे गार्ड ने पकड़ रखा था और तलाशी ली जा रही थी। यह तलाशी वार्डर ले रहे थे और बिलकुल बाहर ली जा रही थी। मैं दौड़ा–दौड़ा आया और श्री सवाईसिंह को दोनों वार्डरों से छुड़ाया और उसे वार्ड में ले जा रहा था कि जेलर ने घेरा डलवा दिया। मैंने उसे कहा कि झगड़े को बाद में निबट लेना अभी हमें बातें कर लेने दो किन्तु जेलर ने न केवल मानसिक संतुलन ही खो दिया था बल्कि उससे मानवता तक किनारा ले चुकी थी। मुझे उसने कहा कि मैं तुम्हें काल कोठरी देता हूँ। मैंने चुपचाप श्री सवाईसिंह को छोड़कर काल कोठरियों की तरफ जाना शुरू किया। डाक्टर पास ही खड़ा था उससे मैंने कहा देख लीजिये मेरे व आपके बातें करते करते बाहर श्री सवाईसिंह से झगड़ा किया जा रहा था। उसका बीच–बचाव करने के लिए मध्यस्थता कर रहा था और इधर मुझे ही काल कोठरी दी जा रही है। डाक्टर कुछ नहीं बोला। मैं चलते–चलते आधी दूर ही आया कि मेरे मन में विचार आया कि अहिंसा मनुष्यों के हृदय परिवर्तन के लिए प्रयोग में ली जाती है, किन्तु जो मानवता खो देता है उसके सामने अहिंसा प्रयोग जंगली घोड़े की आरती करना है। इस अन्यायपूर्ण आदेश का विरोध करना मैंने अपना नैतिक कर्तव्य समझा और मैं बीच मार्ग में घूमकर धोती चढ़ाकर खड़ा हो गया कि मैं काल कोठरी में नहीं जाता जिस किसी की हिम्मत हो वह आकर मुझे जबरदस्ती ले जाय। वार्डर सब ठिठक गए और एक भी आगे नहीं बढ़ा। जेलर बोला मैं आज्ञा देता हूँ कि तनसिंह को काल कोठरी में जबरदस्ती डाल दिया जाय। मैंने कहा मैं आपकी इस आज्ञा को गैरकानूनी,अन्यायपूर्ण और अमान्य मानता हूँ इसलिए मैं इसका बल से विरोध करता हूँ। जब किसी को मेरे हाथ लगाने की हिम्मत नहीं पड़ी तो हैड वार्डर ने स्थिति संभाल ली और कहा कि आप काहे को नाराज होते हो, चलो बैरक में चलें और इस पर मैं अपनी बैरक में आ गया।

डाक्टर से काफी बात चीत हुई। मैंने सम्पूर्ण स्थिति से अवगत करा

दिया। जेलर भी वहीं बैठा था। डाक्टर की यही शिकायत थी कि अखबार जेलर ने पहले निजी उत्तरदायित्व पर दिये थे और उसका जिक्र मैंने भूख हड़ताल के नोटिस में कर दिया यह अच्छा नहीं किया । मैंने कहा जेलर को अचानक अखबार बन्द करने की कोई कार्यवाही अपनी ओर से नहीं करनी चाहिए थी। अन्ततोगत्वा जेलर ने मंजूर किया कि मेरी गलती हो गई और भविष्य में मैं इसी प्रकार अखबार देता रहूँगा और बजाय किसी और के मार्फत भेजने के मैं खुद लाया करूंगा और भूखहड़ताल तोड़ दी। उस दिन जेलर का यह स्वीकार करना कि मैं पत्र दे दूंगा असल में दूसरे दबाव के कारण था और वह था कि दूसरे ही दिन आयुवानसिंह जी टोंक लाए जाने वाले थे और उसने देखा कि और भी बदनामी होगी। इस प्रकार दूसरी भूख हड़ताल बड़ी उत्तेजनापूर्ण परिस्थितियों में सम्पूर्ण हुई। जेलर ने उस समय कहा था कि वह भूख–हड़ताल नोटिस वापिस ले लीजिये और उसकी जगह दूसरा नोटिस लगा देते हैं क्योंकि उसमें अखबारों का जिक्र है। मैंने स्वीकार कर लिया था किन्तु वह नोटिस बाद में वापिस नहीं लिया गया इससे मेरा अन्दाज है कि वह नोटिस ही नष्ट कर दिया होगा और इस भूखहड़ताल के तथ्य को ही पूर्णतया छिपा दिया।

दूसरे ही दिन तारीख 23.3.56 को दोपहर में आयुवानसिंहजी लाए गए। वे पहले से ही भूख हड़ताल पर थे। हम दोनों ने भी उनकी सहानुभूति में भूख हड़ताल कर दी। ता.23.3.56 का बनाया हुआ भोजन भी नहीं खाया। इस भूख हड़ताल में हमारे साथ बड़ा सभ्यतापूर्ण व्यवहार किया गया। रोज डाक्टर आता था। दोनों समय कम्पाउण्डर भी हमें देख जाया करता था। पहले दिन आयुवानसिंहजी को हमसे अलग करने की तजबीज की गई। मैंने उन्हें कहा कि अलग भेजना है तो उन्हें यहाँ भेजना एक मजाक थी। सरकार ने उन्हें यहाँ बातचीत के लिए भेजा है और बातचीत नहीं करने दी जाती तो हम सरकार को उत्तर भेजेंगे कि उनका भेजना व्यर्थ हुआ। इस पर डाक्टर भी नरम हो गया और हमें आपस में एक स्थान पर रखा गया। यह भूख हड़ताल तारीख 26.3.56 को दोपहर को लगभग दो बजे समाप्त हुई। सरकार ने मांगें मंजूर कर ली और गृह मंत्री का हमारे पास इसी विषय का पत्र आगया था। इस हड़ताल की मांगें थी कि सभी भूस्वामी बंदियों को भोजन सम्बन्धी सुविधाएँ दी जानी चाहिए। यह मांग कुछ पत्र व्यवहार के बाद स्वीकृत हुई।

इस प्रकार तीन भूख हड़तालों में सिवाय अन्तिम हड़ताल,अन्य हड़तालों में हमारे साथ नितान्त ही अभद्रता और उपेक्षापूर्ण व्यवहार किया गया था।

प्रकरण : छः

भोजन व्यवस्था

भोजन हमें बी क्लास का दिया जाता था। मेरे आने से पहले श्री सवाईसिंह को बी श्रेणी का भोजन दिया जाता था। श्री सवाईसिंह को जो भोजन सामग्री दी जाती थी उसका दो तिहाई हिस्सा ही मुझे दिया जाता था। श्री सवाईसिंह को दिन में साढ़े आठ छटांक और मुझे 5 छटांक ही आटा मिलता था। इस प्रकार प्रति समय 2 छटांक आटा मेरे हिस्से का आता था। पहले श्री सवाईसिंह को भी इतना ही मिला करता था और उसने जब जेलर को कहा तो उसने श्रम करने का प्रार्थना पत्र देने को कहा। तदनुसार श्री सवाईसिंह ने प्रार्थना पत्र भी दिया। उस पर जिलाधीश द्वारा श्रम के लिए आज्ञा प्राप्त कर ली गई और नियमित रूप से पूरी भोज्य सामग्री अर्थात दिन में साढ़े आठ छटांक आटा मिलने लगा। मेरे आने पर दोनों का 14 छटांक आटा मिलता था और हम उससे सन्तोष कर लिया करते थे। फलों के स्थान पर टमाटर मंगा लिया करते थे। इससे दोपहर को कुछ खाकर दिन निकल जाता था किन्तु हमने जब पहली भूख हड़ताल की थी उसके बाद श्री सवाईसिंह की डाइट भी अपरिश्रमी कर दी। इसका हमें पता भी नहीं लगा। रोजाना हम तृप्त नहीं होते थे किन्तु यह सोच लेते थे कि हमारी पाचन शक्ति उग्र होती जा रही है। उस डाइट के बाद काम लेना भी जारी रहा और श्री सवाईसिंह हमेशा कार्यालय में काम करते रहे। बहुत दिनों बाद हमने हमारे रसोइये को पूछा तब पता लगा कि हम दोनों को अपरिश्रमी डाइट मिल रही है।

बीच में श्री सवाईसिंह जयपुर अपनी पेशी पर चला गया था, उस समय मैं अकेला ही था। मेरे लिए यह भोजन बहुत कम पड़ता था इसलिए सब्जी में आलू मंगाया करता था जिन्हें उबाल कर खाता था। डाक्टर और जेलर का भी ध्यान आकृष्ट किया गया। जेलर ने तब कहा कि आप लेबरिंग डाइट के लिए लिख दीजिये तो आपको भी दफ्तर में काम करने पर वह डाइट मिल जाया करेगी। तदनुसार मुझसे काम भी लिया गया किन्तु अन्त तक भी मुझे अपरिश्रमी डाइट दी गई। मेरे काम का यह है कि फरवरी और मार्च के महीने के मासिक और वार्षिक विभिन्न प्रकार के गोश्वारे (Returns) मैंने अपने हाथों से तैयार किये थे वे अभी भी दफ्तर में और आई.जी. के कार्यालय में

होंगे। मैंने बार–बार कहा भी किन्तु जेलर को केवल यही बातें आदेश के रूप में मिली थी कि मुझे सुविधाओं के नाम पर कोई विशेषता की बात नहीं उठानी चाहिये। अन्ततः भोजन और रोटी के नाम पर ज्यादा आवाज उठाना मुझे नैतिक दृष्टि से अच्छा नहीं लगा। फलस्वरूप जो कुछ भी मिल जाता था उसी में निर्वाह किया करता था। मेरा रसोइया एक राजपूत ही था जिसका नाम श्री छगनसिंह था। वह अपने लिए जो रोटी मिलती थी उसमें से आधी रोटी बचाया करता था और मेरे लिए सदा वह आधी रोटी रख लिया करता था। पहले–पहले जब मुझे बहुत भूख लगती थी वह रोटी खा लिया करता था किन्तु मुझे बाद में यह बात अच्छी नहीं लगी कि मेरे लिए शायद वह भूखा तो नहीं रह रहा है, इस कारण उस रोटी को भी मैं नहीं लिया करता था।

श्री सवाईसिंह नियमित रूप से कार्यालय व स्टोर में लिखापढ़ी का काम किया करते थे। भण्डार गृह का चेकिंग कभी नहीं हुआ था इसलिए कुछ वस्तुएं तो बढ़ी हुई हैं और कुछ कम पड़ती हैं किन्तु उसका कोई हिसाब नहीं था। श्री सवाईसिंह और मैंने भी इस काम में मदद दी किन्तु उसका बदला जेलर यही दिया करता था कि बातों में निहायत मिठास भरकर भीतर ही भीतर वह जला करता था। वह राजनैतिक विषयों पर भी बहस करने को उतारू हो जाया करता था। एक दिन बातों ही बातों में हमने कह दिया कि असल में किसान और जागीरदार,जाट या राजपूत का वास्तविक संघर्ष नहीं है। यह बनावटी संघर्ष है और इसके पीछे बुद्धिजीवी ब्राह्मण और बनिये का षड़यन्त्र है जो उनका राजनैतिक रूप से शोषण किया करता है। वह स्वयं ब्राह्मण है। हमने तो उसे व्यक्तिगत रूप से लक्ष्य करके तो कोई बात नहीं कही थी किन्तु उसने उस दिन से यही धारणा बना ली थी कि हम लोग सरकार के दुश्मन हैं ही, ब्राह्मण होने के नाते उसके भी शत्रु हैं। हमें बड़ा आश्चर्य होता कि इस प्रकार के मूर्ख लोग भी अफसर बना दिये जाते हैं जिनको साधारण व्यवहारिक ज्ञान भी नहीं कि उनका हमें राजनैतिक शिक्षण देना व्यर्थ है।

आखिर सब प्रकार की कोशिश करने पर भी श्री सवाईसिंह को श्रमिक डाइट न मिली तो हमने नियमों के अनुसार प्रार्थना पत्र दिया कि हम दोनों को भोज्य पदार्थों के स्थान पर उन पदार्थों की कीमत के दाम दे दिए जाएं जिससे हम आपस में अपना निजी रूप से भोजन बनवा सकें। नियमों में इस प्रकार की व्यवस्था है किन्तु जेलर ने ऐसी कोई सुविधा हमें नहीं दी। देता भी कैसे, उसे तो अपना एक ही लक्ष्य पूरा करना था कि जिस किसी प्रकार से भी हमें तंग करना, ताकि इससे हमें मानसिक कष्ट हो। शायद उसकी यह

धारणा थी कि इस प्रकार तंग आकर हम सरकार के आगे माफी मांग लेंगे जिससे उसे अपनी योग्यता सिद्ध कर पदोन्नति प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हो। आखिर 23.3.56 को जब जिलाधीश ने हमसे मुलाकात की उस समय जेलर को फटकारा कि जो वाजिब बात हो और आप कर सकते हों आप क्यों नहीं करते। उसके बाद हमको वह सुविधा मिली और हमने मांस के बदले में आटा और घी मंगवा कर उदरपूर्ति का साधन जुटाया।

जिस नजरबन्द से श्रम लिया जाता है उसको उस श्रम के बदले में सरकार की ओर से पारिश्रमिक भी दिया जाता है। श्री सवाईसिंह से जब श्रम बन्द कराया गया तो हमने उसके लिए मुख्य सचिव राजस्थान सरकार को उसके श्रम के बदले में पारिश्रमिक के लिए ता.21.3.56 को प्रार्थना पत्र भी दिया। हमें मालूम नहीं कि जेलर ने यह प्रार्थनापत्र आगे भेजा या नहीं किन्तु जयपुर आकर हमने उसके लिए याददिहानी भी भेजी फिर भी कोई उत्तर नहीं आया।

प्रकरण : सात

मिलन

1 कलैक्टर

हमें सब प्रकार से मानसिक पीड़ा पहुंचाने और न्याय तथा अन्याय की निरंकुशता लादने का जो कार्य किया जा रहा था उसका असली सूत्रपात कलैक्टर ही करता था,ऐसा हमें जेलर ने बताया लेकिन जब कभी कलैक्टर ने आकर मुलाकात ली तब उसने अपने आप को निष्पक्ष ही सिद्ध करने का प्रयास किया। सबसे पहले कलैक्टर ता.9.2.56 को हमसे हमारी भूखहड़ताल टूटने के बाद मिलने आया। उसने हमारे साथ हमदर्दी बताने का भी प्रयास किया और हमारी कोठरी के पर्दे लगाने, तारत के दरवाजे आदि लगाने के सुझाव जेलर को दिये। उस समय अखबारों के लिए बातचीत चली। मैंने उन्हें कानून बताया किन्तु उन्होंने कहा कि मामला सरकार को सुपुर्द किया है इसलिए वे अब कुछ नहीं कर सकते। यह मुलाकात हमारे वार्ड में ही हुई। दूसरी बार कलैक्टर ता.23.3.56 को हमसे मिलने के लिए आया, उस वक्त भी हम भूख हड़ताल पर थे। उस दिन मुझे अकेले से ही दफ्तर में बुलाकर बाचतीत की। जेलर को भी दफ्तर के बाहर कर दिया। उस दिन उसने बहुत ही लम्बी चौड़ी बातें की। यहाँ यह भी कह देना उचित है कि कलैक्टर स्वयं भी जाट है। उसने भूस्वामी संघ विशेषतः राजपूतों के विषय में बातें करते हुए सुझाव दिया कि आपस में मनमुटाव दूर हो जाना चाहिये और बातचीत किसी जाट नेता के मार्फत करनी चाहिये। बातचीत में मुझे विश्वास हो गया कि जिस स्थान पर यह कलैक्टर रहेंगे उस स्थान पर समझौता वार्ता ठीक प्रकार नहीं चल सकती इसलिए ता.23.3.56 को मैंने सुखाड़िया जी को गोपनीय पत्र लिखा जिसमें हमने कहा था कि हमारा टोंक से स्थानान्तरण कर दिया जाय जिसका एक अनिवार्य कारण वहां के अधिकारी थे। मैं उन सब बातों में पड़ना नहीं चाहता जो उन्होंने कही थी।

कलैक्टर ने बाद में हमारे वार्ड में आकर आयुवानसिंह जी से भी बातचीत की। आयुवानसिंह जी की हालत उस दिन बड़ी खराब थी, उनका रक्त का दबाव बहुत कम हो गया था इसलिए डाक्टर ने कह रखा था कि बातें बहुत कम करें। हमने भी उनकी राय मान ली थी और उन्हें अधिकतम आराम

पहुंचाने की व्यवस्था कर ली। बातचीत भी हमने आगे की किसी तारीख के लिए स्थगित कर दी जब तक कि उनकी भूख हड़ताल के कारण बिगड़ी हुई शारीरिक हालत सुधर न जाय। कलैक्टर ने हमें कहा कि आप बातचीत प्रारम्भ कीजिये। मैंने कहा कि इन परिस्थितियों में बातचीत नहीं हो सकती क्योंकि उनकी हालत खराब है और डाक्टर ने भी ऐसा ही कहा है किन्तु कलैक्टर इस बात का बड़ा इच्छुक था कि वह हमारी बातें जाने। उसने कहा कि लाखों लोगों की इच्छा के लिए हम कष्ट भी सहन कर बातचीत करें। हमें बड़ा क्षोभ हुआ कि डाक्टर तो बात के लिए मना करता है और कलैक्टर कहता है बात करो। हमें समझ में नहीं आया कि इस प्रकार बात करने से उसका क्या मकसद था।

भूख हड़ताल की मांगों के विषय में चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि मांग बड़ी टेढ़ी हैं। सभी लोगों को बी क्लास देना बहुत कठिन है। हमने कहा कि सरकार के लिए यह कोई कठिन नहीं है। पिछले आन्दोलन में भी यह सुविधाएं भूस्वामियों को दी जाती थीं। आखिर जाते समय उसने मुझे अलग लेकर समझाया कि किसी प्रकार आयुवानसिंहजी को भूख हड़ताल तुड़वा कर बातचीत के लिए प्रयास करना चाहिये। मैंने उन्हें चलता किया। बातचीत के दौरान में उन्होंने कहा कि हणुवन्तसिंह जी कौन हैं? मैंने कहा कि वे वकील हैं। उन्होंने कहा कि वे आपसे मिलना चाहते हैं, किन्तु मैंने कहा कि हमें पता नहीं कि आप वकील हैं या नहीं इसलिए आपसे पूछ रहा हूँ। मैंने उनका पूरा परिचय दिया तो उन्होंने कहा कि वे कल आ जावेंगे। लेकिन वे दूसरे दिन नहीं आए। ता.28.3.56 को कलैक्टर तीसरी बार जेल में आए और दफ्तर में हम दोनों को बुलाया और बातचीत के लिए कहा। मैंने कहा कि मैं सरकार को पत्र लिख रहा हूँ किन्तु हणुवन्तसिंह जी का इन्तजार कर रहा हूँ। तब उन्होंने बताया कि उन्हें चीफ सैक्रेट्री से टेलीफोन आया है सो कल हणुवन्तसिंह जी आपसे मुलाकात कर रहे हैं।

2. वकील

नजरबन्द व्यक्तियों को टोंक अधिकारियों ने इतना अछूत समझा कि वे किसी भी मनुष्य नामधारी प्राणी से एकान्त में बातचीत करने की कल्पना ही नहीं करते थे। समझौता वार्ता प्रारम्भ हुई उस समय तो एकान्त में बातचीत का तांता लग गया था लेकिन उससे पहले तो सिर्फ केवल वकील को ही एकान्त में मिलने का अधिकार रहता है। किन्तु मुझे और मेरे वकील को इस साधारण अधिकार से भी वंचित रखा गया। मुझसे ता.11.2.56 को मेरे वकील श्री मोहर सिंह जी मिलने आए तो जेलर ने कहा कि एकान्त में मिलने की सुविधा नहीं दी जा सकती, ऐसी जिलाधीश की आज्ञा है। हमने

उसे कानून बताया जिसमें यह स्पष्ट लिखा हुआ था कि वकील से मुलाकात के समय जेल अथवा अन्य किसी अधिकारी को इतना दूर रहना चाहिये कि जिससे वे दृष्टिगोचर होते रहें किन्तु बातचीत नहीं सुन सकें। लेकिन जैसा पहले बताया गया कि जिन्होंने कानून की मंशा के साथ बलात्कार किया है वे कानून का पालन क्यों करने लगे। अन्ततोगत्वा वकील मोहरसिंह जी ने नियम का हवाला देते हुए लिखित में दरख्वास्त दी कि हमें एकान्त में मिलने का अधिकार है और आप नहीं मिलने देते हो तो लिखित में वैसी आज्ञा दे दीजिए। पाठकों को आश्चर्य होगा कि ऐसा जेलर ने लिख ही दिया कि जिलाधीश के आदेशानुसार एकान्त में नहीं मिलाया जा सकता। मैंने ऐसी मुलाकात लेने से इनकार कर दिया किन्तु वकील साहब ने सुझाव दिया कि जेलर की उपस्थिति में जिस सीमा तक बात कर सकते हैं उतनी बात कर लेते हैं और बाकी की बातचीत के लिए दुबारा बातचीत की व्यवस्था करूंगा। उनका सुझाव मानकर हम दोनों वकील साहब से मिले।

दूसरे ही दिन तारीख 12.2.56 को मैंने आई.जी.जेल को एक पत्र लिख कर हर्जाने के 500 रुपये मांगे। उसका मेरे पास आज तक कोई उत्तर नहीं आया किन्तु जेलर से इस विषय में पूछताछ जरूर हुई। एक दिन जेलर ने मुझसे प्रार्थना की कि अब वकील वाला किस्सा तो खतम करो, आई.जी. मेरी जान खा रहा है। मैंने कहा कि इस समय तो मैं देख रहा हूँ कि आप लोगों का क्या रुख है किन्तु जेल से बाहर जाने के बाद दावा करूंगा जिसमें जिलाधीश भी फरीक मुकदमा होगा। इस बात पर जिलाधीश ने भी देखा कि कहीं मुझ पर भी आफत न आ पड़े तो उसने जेलर को एक गुप्त पत्र लिखा जिसमें सूचित किया गया कि वकील को एकान्त में मिलने दिया गया था इसलिए हर्जाने का कोई प्रश्न ही पैदा नहीं होता। मुझे इस पर बेहद आश्चर्य हुआ। जिलाधीश का ऐसा अद्‌भुत बचाव लेना यह स्पष्ट बता रहा है कि या तो वकील की दरख्वास्त ही गायब कर दी गई या उस पर लिखा हुआ जेलर का हुक्म काटकर दूसरा लिखा गया। जिलाधीश वही है जो पहले बाड़मेर रह चुके हैं और उनके विरुद्ध इस प्रकार की भी शिकायतें थीं कि उन्होंने अदालती फायलों के कागजात फाड़ दिये थे। सरकार के प्रतिष्ठित अधिकारियों का इस प्रकार झूठ का आश्रय लेकर नितान्त ही अन्यायपूर्ण और आधारहीन पत्र लिखकर अपने षड़यन्त्रकारी विरोध पर पर्दा डालना निश्चित रूप से अपने प्रभाव भी डाले बिना नहीं रह सकता। जब सरकार के उच्चाधिकारियों में इस प्रकार अपनी गलतियों को छिपाने के लिए रेकार्ड नष्ट किया जाता है तो बाड़बेल खाने वाली कहावत शतशः चरितार्थ होती है। उसके बाद मोहरसिंह जी फिर ता.29.2.56 को डा.ए.पी.सिंह आदि के

साथ मुलाकात के लिए आऐ थे किन्तु उस समय एकान्त में मिलने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता।

दूसरे वकील थे श्री हणुवन्त सिंहजी जो हमसे मिलने के लिए तारीख 23.3.56 को टोंक में आए। इधर जब उसी दिन कलैक्टर ने हमें यह बतलाया कि वे आए थे और हमसे मुलाकात लेंगे और उनके न आने पर हमें बड़ा ताज्जुब हुआ कि आखिर बात क्या हो गई। मोहरसिंह जी और हणुवन्तसिंह जी दोनों आए और एक को भी मिलने क्यों नहीं दिया गया अथवा बिना मिले वापिस क्यों चले गए। तारीख 29.3.56 को हणुवन्तसिंह जी हमसे मिले और उन्होंने हमें बताया कि जिलाधीश ने हमें मिलने के लिए इजाजत नहीं दी। इस पर वे जयपुर गए और सचिवों से मिलकर मुख्य सचिव का हुकुम लाए कि जिस पर आज उन्हें मिलने दिया गया है। उस दिन भी जब वे मिले तो जेलर ने अशिष्टता बताने में कोई कमी नहीं रखी। बातचीत के लिए मेरा उत्तर में मुंह करवाया और हणुवन्तसिंह जी का मुंह पूर्व में कराया गया और हमें आदेश दिया गया कि आप इसी स्थिति में बात करते रहेंगे तथा कुर्सियों की न तो दिशा परिवर्तन करेंगे और न आगे पीछे हटावेंगे। खैर हमें तो बातें करनी थी इसलिए जैसी भी परिस्थितियाँ उपलब्ध हुई उसमें बातें की ही।

व्यक्तिगत मुलाकातें तो हमारी किसी से भी नहीं हुई,एक दिन श्री इन्द्रसिंह ता.13.2.56 को आए थे उनके तो पैर भी लगने नहीं दिए हांलाकि वही इन्द्रसिंह पहले एक बार श्री सवाईसिंह से मिल चुके थे, और वह भी उसके वार्ड में जाकर। उस समय पुलिस अधिकारी की भी जेलर ने कोई जरूरत नहीं समझी।

3. अखिल भारतीय क्षत्रिय महासभा का शिष्टमंडल

ता.29.2.56 को दोपहर के 1 बजे के लगभग हम पेड़ के नीचे बैठे थे कि जेलर आया और कहा कि चलो रेडियो सुनें दफ्तर में। हमें आश्चर्य तो हुआ कि रेडियो सुनाने का आज अचानक कैसे मोह हो गया फिर भी हम दफ्तर में चले गए,हमारे पीछे हमारे वार्ड की सफाई की गई। कमरे को पानी से धुलाया गया और दरियाँ गिरी हुई थी उसको वापिस लगाया गया और पूरा टीपटाप कर दिया। जब मेट ने आकर इशारे से बताया कि सफाई हो चुकी है तो जेलर ने कहा कि चलो एक राउण्ड लगा आवें, रेडियो बन्द कर हम वार्ड में गए तो वहां बहुत ही सफाई दिखाई दी। धुला हुआ कमरा देखकर हमने प्रशंसा की तो उसने कहा कि आप कहो तभी धुलवा दिया करें। उसका उस दिन का सारा व्यवहार बड़ा असामान्य लग रहा था किन्तु शाम के 4 बजे के लगभग डा. ए.पी.सिंह,श्री मोहरसिंह व श्री बृजराज सिंह आए तब हमें इस सफाई का रहस्य समझ में आया। वे लोग हमारे निवासादि की सुविधाओं पर

जानकारी के लिए आए थे। जेलर पूरे समय तक उपस्थित रहा। हमने जेल की असुविधाओं के विषय में उनके सामने अपने अभाव अभियोग रखे। दूसरे दिन जेलर ने कहा कि आपकी बातचीत की रिपोर्ट आई.जी.जेल को भेजनी है इसलिए मैंने ही उसके अनुरोध पर रिपोर्ट तैयार की जिसमें बातचीत के मुख्तसिर हालात दर्ज किए।

4. अन्य मुलाकातें

उपरोक्त मुलाकातों के अतिरिक्त जसवन्तसिंह जी जो फिर संसद सदस्य हो गए थे, मिलने के लिए आए थे। वे पहले ही से एकान्त में मिलने का आदेश लेकर आए थे इसलिए वे जब तक बात करते रहे तब तक कोई उपस्थित नहीं था। उन्होंने भूस्वामी आन्दोलन आदि पर बातचीत की और समस्या को सुलझाने का सुझाव दिया। मैंने उन्हें बताया कि इस विषय में ता. 10.3.56 को ही मैं पत्र लिख चुका हूँ किन्तु सरकार वास्तविक रूप में बातें करना नहीं चाहती किन्तु लोगों में यह प्रचार करती है कि बातचीत के लिए वह तैयार है। उनके साथ श्री नाथूसिंह जी भी आए थे। श्री नाथूसिंह जी से बातचीत करते समय एस.डी.ओ.तथा जेलर दोनों उपस्थित थे। उनसे थोड़ी देर तक व्यक्तिगत बातचीत होती रही।

जयपुर आने के बाद तो बहुत सी मुलाकातें हुई लेकिन उन सबका वर्णन यहां देना कठिन है। दूसरी बात यह भी है कि उन मुलाकातों में जेल अधिकारियों अथवा सरकार की ओर से कोई अड़चन अथवा गड़बड़ नहीं की गई थी।

प्रकरण : आठ

बन्दी जीवन के दो माह

2 फरवरी को बन्दी होकर 31 मार्च,1956 को जबकि हम लोग जयपुर भेजे गये इन दो माह के छोटे से समय में मैने जो कटुता,अन्याय,उपेक्षा और अशिष्टता सहन की थी वैसी कभी अपने जीवन में नहीं की। अपने जीवन में मैंने अनेक विषम परिस्थितियाँ सहन की हैं। शारीरिक कष्ट सहना मेरा सदैव का खेल रहा है तथा बाहर भीतर के विरोध में ही मैंने सामाजिक और राजनैतिक जीवन में कदम बढ़ाए थे किन्तु मुझे ऐसा कभी अनुभव नहीं हुआ कि मैंने अन्याय का विरोध करने के लिए अपने आपको असमर्थ पाया हो। जितनी कटुता मैंने कांग्रेसी सरकार और जेल कर्मचारियों के विरुद्ध जीवन भर में अनुभव नहीं की उतनी मुझे इन दो माह में प्राप्ति हुई। जैसा मैं पहले बता चुका हूँ कि जेल आने का यह मेरा पहला मौका नहीं था। इससे पहले दो बार आ चुका हूँ और एक बार तो तीन माह के करीब जेल में ही साधारण राजनैतिक बन्दी की भांति रहा हूँ किन्तु यहाँ कठिनाइयाँ शारीरिक सुविधाओं की नहीं,अपितु सामाजिक, वैयक्तिक और नैतिक सम्मान की थी।

नियमित रूप से तंग करने की श्रृंखला कुछ ऐसी लग रही थी जैसे कि यह सब कुछ योजनाबद्ध कार्य हो रहा है। वार्डरों की उपस्थिति में मेरी तलाशी,कालकोठरी की सजाएं सुनाए जाना, बाहर बारी में से खड़ा–खड़ा बात करूं और जेलर न तो खड़ा होता था और न भीतर ही बुलाता था तथा न बाहर कुर्सी ही देता था कि जिस पर मैं बैठ सकता । नियमित रूप से यह बार–बार स्मरण कराया जाता था कि मैं कैदी हूँ न कि और कुछ। सुविधाओं का जब कभी प्रश्न आता तो हर तरह से टालने की कोशिश की जाती थी। हमने कम से कम भी कुल मिलाकर तीस प्रार्थना पत्र दिए थे किन्तु भगवान ही जाने उन सबका क्या हुआ। नियमों में यह लिखा है कि कोर्ट के नाम दरख्वास्तें हों वह जेलर को सीधी ही कोर्ट को भेजनी चाहिए किन्तु बालोतरा सैसन जज को भेजी गई, मेरी दरख्वास्त को आई.जी. जेल के मार्फत भेजी गई। मेरे नाम से आठ दस किताबें जमा हुई उन्हें एक को भी सैंसर नहीं किया गया और जो पत्र मैं भेजता था उनको पुलिस सुप्रिन्टैन्डैन्ट जयपुर से सैंसर कराया जाता था तथा अखबार पुलिस सुप. टोंक से सैन्सर कराये जाते थे। टोंक के पुलिस सुप. ने अपनी बहादुरी भी इसी में समझी कि

भूस्वामी आन्दोलन की एक भी खबर किसी भी अखबार में न रह जाय। मेरे पास आज भी उन अखबारों के नमूने सुरक्षित हैं कि जिनका कटिंग किया गया है। उनमें भूस्वामी संघ की प्रत्येक खबर को काटा जाता था।

एक दिन जेलर ने हमको हुक्म दिया कि हमको टीका लगाना पड़ेगा। हमने कहा हम नहीं लगवाते। उसने कहा लगाना पड़ेगा। आखिर बात तू–तू मैं–मैं तक पहुंच गई। मेरा कहना था जेल में हमारा टीका लगाना उतना जरूरी नहीं जितना कि जेल के वार्डरों और जेलर को लगवाना,क्योंकि बाहर की बीमारी को वे ही भीतर लाते हैं या फिर नये आने वाले कैदी के टीका लगाना चाहिए। लेकिन जेलर ने अन्त तक टीका नहीं लगाया और हमको ही कमजोर समझ कर उसने अपनी हकूमत छांटने का रास्ता ढूंढने का प्रयास किया।

एक दिन मैंने जेलर को कहा कि मुझे नियमानुसार सब्जी नहीं मिला करती। जैसा मैं पहले बता चुका हूं मुझे दिन में 5 छटांक ही आटा मिलता था। इसलिए उबली हुई सब्जी से पेट भरा करता था किन्तु उसे भी एक दो दिन बन्द कर दिया। इस बात की ओर जब मैंने जेलर का ध्यान दिलाया तो उसने कहा कल से भेज दूंगा। दूसरे दिन नहीं आई तो मैंने आई.जी. जेल को एक पत्र लिखा जिसमें इस जेलर के व्यवहार के साथ साथ सब्जी का भी जिक्र किया। इस पर वह आग बबूला हो गया और मेरे रसोइये और दफ्तर के एक कैदी को 14 दिन के लिये कालकोठरी की सजा दी। मुझे यह बहुत नागवार गुजरा कि गलती किसी की, और सजा पाये बेचारा कैदी। इस पर रो धोकर मैंने दरख्वास्त वापिस ले ली। तब कहीं जाकर उसने कैदियों को बाहर निकाला, इस प्रकार का नृशंस आचरण जब जब भी मैं याद करता हूं मुझे रोमांच हो आता है। विशेषतया इसलिए कि यह स्वतन्त्र भारत की और ढलती हुई बीसवीं शताब्दी की जेल है, जब हमारे साथ ही ऐसा व्यवहार किया जा रहा था तो साधारण कैदियों के साथ कैसा व्यवहार होता था, इसको जान कर कोई भी व्यक्ति दु:खी हुए बिना नहीं रहेगा।

प्रकरण : नौ

अभागे बन्दी

इस जेल में आकर एक ही आराम की चीज थी कि हम खुले रहते थे और सभी कैदियों से हमारा सम्पर्क था इससे जब हमने उन्हें उनके जीवन की बातें पूछी तो वे बड़ी रोचक थी। कुछ ऐसे अभागे थे जो न्याय प्राप्त करने में असमर्थ और जेल के दुर्व्यवहार के भयंकर शिकार थे।

इस जेल का दैनिक औसत लगभग 45 के करीब रहता था। जिनमें अधिकांश आवारागर्दी धारा 109 के अन्तर्गत गिरफ्तार किये गए थे। ऐसा मालूम होता है कि धारा 109 के मुकदमे अनावश्यक रूप से बनाने पड़ते हैं। कई लोगों को सवाई माधोपुर स्टेशन पर बिना टिकट चलते पकड़ लिया जाता है और फिर उस धारा में चालान कर दिया जाता है। सबसे बड़ा अभागा पालीताना का हाजी नामक कैदी था जिसे 109 में पकड़ रखा था। वह गुजराती जानता था इसलिए उसकी भाषा कोई नहीं समझ सकता था। हर एक उसे छेड़ा करता था। झुंझलाहट में आकर वह गुस्से से चिल्लाने भी लगता था। मैं आया तबसे लेकर गया तब तक उस बेचारे को कालकोठरी में ही रखा गया। उसका कसूर यह था कि वह गुजराती भाषा बोलता था जिसको कोई समझ नहीं सकता था। उसे पागल घोषित कर दिया गया किन्तु उसके इलाज की किसको परवाह थी। लगभग नौ माह की सजा तो वह इस प्रकार कालकोठरी में ही बिता चुका था। दो तीन बारक खाली भी थे, यह पता नहीं उसे उन बारकों में न रखकर कालकोठरी में क्यों रखा जाता था। बेचारी मानवता उस अन्धेरी कोठरी में सिसक रही थी। हम कोई उससे जब कभी पूछते थे कि वह इस मुल्क में कैसे आया तो बेचारे के आंसू आ जाते थे। 26 जनवरी को स्वतन्त्रता दिवस पर विशेष उत्सव रखा गया था जिसमें राजस्व मंत्री भी आए थे। उस वक्त भी इस बेचारे ने अपना रोना रोया कि नौ महीने हो गये मुझे छोड़ नहीं रहे हैं और पीट–पीट कर मेरी खाल उधेड़ दी। जेलर के परिचय पर कि यह तो बेचारा पागल है मंत्री महोदय ने इससे अधिक कुछ भी जानने की चेष्टा न कर, बेचारा कह कर जबानी हमदर्दी से ही उनको शान्त बना देना पर्याप्त समझा था। कभी कभी हम जब उसकी कोठरी के पास जाते तो वह इतनी सड़ान्ध देती थी कि उसके पास किसी मनुष्य का खड़ा रहना दुश्वार था। कारण यही था कि वह भीतर ही

तारत जाता था और दो–दो, तीन–तीन दिन तक मेहतर साफ नहीं करता था क्योंकि अधिकारी उसे पागल समझ कर डरते थे कि कहीं वह हमला न कर बैठे। मेरा तो ख्याल है कि किसी समझदार के प्रति भी इस प्रकार का व्यवहार किया जायेगा तो वह भी पागल हुए बिना न रह सकेगा।

एक फैयाज नामक कैदी था जो किसी डकैती के सिलसिले में गिरफ्तार किया गया था, उससे पुलिस ने तो मारपीट की ही थी किन्तु उससे भी तृप्त न होकर सवाई माधोपुर या कोटा की पुलिस और ले गई थी। वहाँ भी उसे बुरी तरह पीटा गया था और फिर सांस खाने के लिए जेल में छोड़ दिया गया। एक दिन यह भी सुना कि उसके लिए सवाई माधोपुर की पुलिस फिर रिमांड लेने आ रही है। वह बिल्ली को देखकर घबराने वाले कबूतर की भांति कांप रहा था कि उसे अब जाने किस तरह पीटा जायगा। कुछ चंडू पीने वाले गिरफ्तार हुए थे। उनको नशे के अभाव में बड़ी तकलीफ उठानी पड़ी। लेकिन उन सब में सुलेमान नामक बन्दी सबसे अभागा था जो एक तो अफीम के नशे के अभाव में बहुत परेशान था और फिर बीड़ी के लिए उसे हनीफ खाँ हैड वार्डर बारक का एक दौड़कर चक्कर लगाने पर एक बीड़ी दिया करता था। एक बीड़ी के लिए वह बूढ़ा आदमी जब नशा छूटने की तकलीफ के कारण नितान्त अशक्त बना हुआ जबरदस्ती दौड़ने का प्रयास करता तो एक ओर हंसी आती और दूसरी ओर दया। लेकिन जेल अधिकारियों के लिए यह उसी प्रकार एक मनोरंजन की वस्तु थी जिस प्रकार शिकारी के लिए शिकार एक मनोरंजक बात होती है।

एक अजीब कहानी चार बन्दियों ने सुनाई जो ओड जाति के थे। उणियारा के बांध पर मजदूरी करते थे और उनके कथनानुसार उनको ठेकेदार ने चोरी का इल्जाम लगाकर फंसा दिया था। अटू, पूनमचन्द, लोंग आदि इनके नाम थे। उनका यह भी आरोप था कि यह ठेकेदार ने जानबूझ कर झूंठा आरोप लगाया है और उससे वह दूसरा मतलब पूरा कराना चाहता है। उन्होंने फिर ठेकेदार के खिलाफ यह भी अर्जी दी बताते हैं कि ठेकेदार उनकी स्त्री वगैरह को भगाना चाहते हैं। कहानी उनकी कुछ भी हो लेकिन वे अत्यन्त दुखी थे। वे पाकिस्तान छोड़कर हिन्दुस्तान आए थे। एक दिन उन्होंने अपना रोना रोते हुए कहा कि इस विदेश में उनका यहां पर कोई भी नहीं। बाल–बच्चों का जाने क्या हाल हो रहा होगा। अन्त में उन्होंने निश्वास डालते हुए कहा कि इससे तो मुसलमान बनकर पाकिस्तान रह गये होते तो आज का यह दिन तो नहीं देखना पड़ता। एक ऐसा भी कैदी था जो फौज से फरारी के आरोप में गिरफ्तार था,किन्तु वह बाहर व भीतर औरतों के कपड़े और चूड़ियां पहने रखता था। वास्तव में डाक्टर की परीक्षानुसार वह नपुंसक भी नहीं था।

बन्दियों की हालत यह है कि वे न्याय अन्याय सभी कुछ मौन होकर सहा करते हैं। गैर मियादी कैदी अर्थात् वे कैदी जिनके मामले न्यायालय में विचाराधीन हैं उनसे नियमानुसार काम नहीं लिया जाता। लेकिन टोंक एक न्यारी ही जेल है। वहाँ लंगर में औनाड़सिंह आदि दो राजपूत बन्दी,कासम नामक कैदी,दरियां बनाने व फैक्ट्री में और बाकी के जेल के बाहर सड़क समतल करने और भीतर खेल के मैदान बनाने के लिए रेत खोदते और ढोते रहते हैं। यह जानते हुए कि काम कराने का नियम नहीं है फिर भी डर के मारे वे कुछ नहीं बोलते और पुराने जमाने के जीते हुए गुलामों की भांति बोझा ढोते रहते। हट्या नामक मीणा को रोज लकड़ियाँ चीरनी पड़ती थी। एक उमर नामक पोस्टमैन कैदी था जिसने काम करने से इनकार कर दिया तो पहले तो उसे धमकाया और बारक में बन्द ही रखा किन्तु बाद में न तो उससे काम ही लिया जाता था और न बारक में बन्द ही किया जाता। नियमानुसार महज कैद होती है उन कैदियों से भी काम नहीं लिया जाता। मुन्शी नामक एक पाकिस्तानी कैदी पासपोर्ट कानून में गिरफ्तार था जिसे महज कैद थी किन्तु उसके रोने धोने पर भी उसे काम से छुट्टी नहीं दी गई। वह अस्पताल में आया और उसने अपने पेट की पीड़ा से कम्पाउण्डर को अवगत कराया और आंसू भरकर कहा मुझे दो दिन का आराम करने दो। उसका हिस्ट्री टिकट मंगाया तो हनीफ खां ने टोक दिया और कहा कि यह तो सादा कैद वाला है इसलिए तो इससे कोई काम लिया ही नहीं जाता अतः डाक्टर को लिखने की जरूरत ही नहीं। बाद में डाक्टर या कम्पाउण्डर की अनुपस्थिति में उसे फटकारा जाता कि आइन्दा हमेशा मेट के साथ ही कम्पाउण्डर के पास जाया करो। अकेले मत जाओ, और यदि मेट कहे तो तुम्हें जाने की कोई जरूरत नहीं, तो बीमार को सिर्फ मनेच्छा से ही सन्तुष्ट होना पड़ता था।

गाली गलौज यहां के वार्डरों व अधिकारियों की मातृ भाषा है, इसलिए किसी भी कैदी से फटकारते समय इसी भाषा का प्रयोग करते हैं। मैंने देखा है कि कई कैदी बड़े स्वाभिमानी होते हैं एक दूसरे को आपस में गाली देते हैं तो पलट पड़ते हैं कि गाली तुमने कैसे दी, किन्तु जहां जेल कर्मचारियों की गाली का सवाल है वहां उन्हें सहन करने के सिवाय और कोई मार्ग नहीं था। गाली भी इतनी फाहिसा बोली जाती थी कि भले आदमी का पास खड़ा रहना कठिन हो जाता था।

मिलाई का दिन जेलर की आमदनी का दिन होता था, इसलिए उस दिन हम पर दफ्तर में या उसके पास आने की मुमानियत थी। कई लोग मिलाई के लिए दरख्वास्तें लिख कर नहीं लाते थे उनको जेलर रिश्वत पर ही मिलने

देता था। एक बार तो पैसे मेरे सामने ही दिये गए, वो भी एक दो आने। मुझे बड़ी शर्म महसूस हुई कि राजस्थान का प्रशासनिक स्तर किस शर्मनाक जगह पर पहुंच गया है।

एक दिन कल्लू और ईदिया नामक कैदियों की जमानत हो चुकी थी मगर उनको छोड़ा नहीं। आखिर जामिन ने कहा कि उनकी जमानत हो गई है, इसलिए उनको छोड़ दिया जाय। उसे कहा, दरख्वास्त लिखकर लाओ कि मैं जामिन हूं तभी हम छोड़ेंगे। बेचारे ने कहा दरख्वास्त का तो मुझे मालूम नहीं था और मुझे शहर को आने जाने के लिए चार मील का चक्कर पड़ जायगा और फिर रात पड़ जायेगी तथा जेल बन्द हो जायेगी। उसे यह मालूम नहीं था कि जमानत होने पर जेलर को स्वतः ही छोड़ना पड़ता है इसलिए जेलर भी उसकी अनभिज्ञता का लाभ उठाना चाहता था। ऐसे न जाने कितने उदाहरण होंगे किन्तु वह उदाहरण सवाईसिंह के रूबरू होने से हमें ध्यान है। आखिर श्री सवाईसिंह ने दरख्वास्त लिखी। जेलर ने कहा तुम शहर जाते तो भी चार आने दरख्वास्त लिखाई के अर्जीनवीस को देते इसलिए चार आने रखो। यहां तुम्हारे बाप के कोई नौकर नहीं हैं कि मुफ्त में दरख्वास्त लिखें। उस बेचारे को तो गरज थी। उसने एक रुपए का नोट दिया, कारण कि उसके पास खुले पैसे नहीं थे। आखिर वह पूरा रुपया भी छोड़ा। तब जाकर उन बन्दियों को रिहा किया गया।

जेल में होने के कारण बेचारे बन्दियों और उनके अभिभावकों को कितनी इस प्रकार की परेशानियाँ और नाजायज खर्च बरदाश्त करना पड़ता है, भगवान ही जाने। लेकिन अफसरों को खुश रखने के बाद कोई भी कर्मचारी चादर तान कर सोए। उनकी इन बातों की ओर जाने की सरकारी प्रशासन को आवश्यकता महसूस नहीं होती और इस प्रकार राजस्थान की गरीबी, अशिक्षा, बन्दी अवस्था की परिस्थितियों का लाभ उठा कर अफसर खून चूसते हैं और कांग्रेसी कहते हैं कि यह जनता का राज्य है।

प्रकरण : दस

दल बन्दियाँ और षड़यन्त्र

बन्दी

आम तौर पर बंदियों में दल बन्दी होती है किन्तु उसकी तह में कोई सैद्धान्तिक मतभेद नहीं होते,क्योंकि बन्दी जीवन में सिद्धान्त के प्रति आचरण की तो किसी को फिकर ही नहीं है। उनकी दल–बन्दियाँ खाने, कपड़े और काम पर होती हैं क्योंकि यही चीजें उनके जीवन संघर्ष का कारण बनती हैं।

नियमानुसार मियादी और गैरमियादी कैदियों के लिए अलग–अलग खाने की व्यवस्था होनी चाहिए क्योंकि दोनों के राशन की मात्रा भी अलग–अलग होती है। सख्त सजा वालों को सबसे अधिक आटा मिलता है और महज व गैरमियादी कैदियों को उनसे कम मिलता है। किन्तु टोंक जेल में ऐसा कोई कानून काम में नहीं आता। वहाँ सभी का खाना एक साथ बनता है और सबको समान खाना मिलता है कि तोल में सामान नियमानुसार तोला जाता है इसलिए आटा कम पड़ जाता है। आटे की कमी को लेकर बन्दियों में परस्पर झगड़ा हो जाता है। वे इस बात की शिकायत करने की तो हिम्मत ही नहीं कर सकते कि नियमानुसार उन्हें अधिक और कम मिलना चाहिए बल्कि उनकी शिकायत यही होती है कि भारी रोटी अमुक को चली गई और अमुक को हल्की रोटी गई। तब यह व्यवस्था की गई थी कि आटा गूंदने के बाद उसे तराजू में तौल कर रोटियां बनाई जावे। फिर भी रसोई वाले अपने लिए कुछ बचा ही लेते थे और अपने दल के लिए विशेष सुविधाएँ देते थे। इस प्रकार खाने की समस्या को लेकर बनी हुई दलबन्दियां अन्य क्षेत्रों में यथावत् चलती रहती हैं।

इन दल बंदियों को टोंक में एक विशेष रूप मिलता है। राजस्थान में शामिल होने के पहले टोंक एक मुसलमानी रियासत थी और इसीलिए नौकरियों में भी मुसलमान कर्मचारी अधिक थे। जेल में यह साम्प्रदायिक भावना अधिक सुरक्षित रही क्योंकि उस भावना की ओर किसी का ध्यान आकृष्ट नहीं किया जा सकता था। कहा जाता है कि टोंक रियासत के जमाने में जेल धर्मपरिवर्तन का सक्रिय क्षेत्र था। जो कैदी धर्म परिवर्तन कर इस्लाम को स्वीकार करते थे उनको रैमिशन आदि की विशेष सुविधाएँ थी। इसका मतलब यही था कि अल्पसंख्यक जाति के कैदियों के साथ सौतेला व्यवहार किया जाता था। राजस्थान बनने के बाद भी

इसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ कारण कि अभी तक पुराने कर्मचारी मुसलमान हैं और वे अन्य जाति के प्रति घृणा की भावना रखते हैं। हैड वार्डर हनीफ खां तो जरूरत से ज्यादा फिरका परस्त है। उसको बगीचे का इन्चार्ज बनाया हुआ है इसलिए वह बगीचे में सबसे आसान काम मुसलमानों को दिया करता था। किसी मुसलमान को बीड़ियों का हुक्म हो जाता था तो वह शिफारिस से हटवाता था। यदि कोई बन्दी इस प्रकार की साम्प्रदायिक भावना से घृणा करता था तो उनकी तरफ हनीफ खां की विशेष आंख रहा करती थी। वहां का मेट अमीर बेग भी मुसलमान था। साधारण बंदियों पर मेट का दबदबा होता है और अमीर बेग हमेशा हनीफ खां के इशारे पर इस दबदबे को साम्प्रदायिक रूप दिया करता था। मुसलमान कैदियों का एक दल था जिसमें अमीर बेग के अलावा फैयाजखां, सुभान, अलादिया, जमाल, वगैरह थे दूसरी ओर हट्या, नाराण और गोविन्द सिंह वगैरह थे। मैंने जेलर का इस ओर ध्यान आकृष्ट किया था किन्तु कर्मचारियों में भी ऐसी तो नहीं किन्तु दूसरी प्रकार की दलबंदी थी, जिसकी वजह को लेकर वह भी हनीफ खां से दबा हुआ था। उसको यह विश्वास हो गया था कि हनीफ खां आई.जी. जेल को शिकायतें नियमित रूप से भेजा करता था इसलिए उसे नाराज करने का अर्थ था–आई.जी. जेल को नाराज करना।

किसी घटना विशेष पर तो इस दल बन्दी की प्रतिक्रियाएँ हुआ ही करती थी और उनमें मुसलमानी गुट की ही विजय होती थी किन्तु साधारण दिनों में बिना किसी घटना के भी गुटबन्दी की नीति तो चला ही करती थी। हनीफ खाँ का हमेशा ध्यान रहता था कि सख्त काम गैर मुसलमान को ही दिया जावे और रखवाली रखने,सब्जी तोड़ने,पानी की नाली को साफ करने और सूत सुलझाने आदि के काम मुसलमान को दिए जावें। इस प्रकार साम्प्रदायिक वातावरण का इतना आतंक छाया हुआ था कि किसी की हिम्मत नहीं पड़ती कि कोई चूं तक करे।

2. कर्मचारी गण

सबसे रोचक दल बन्दियाँ व षड़यन्त्र कर्मचारी वर्ग में होता था। जेलर और क्लर्क दोनों के आपस में नहीं बनती थी। इसके कई कारण हैं जिनका विवरण आगे विस्तार से लिखूंगा किन्तु इनके लिए हनीफ खां ही खास उथल पुथल मचाने वाला आदमी था,यहां इतना बताना आवश्यक है। इस दल बन्दी का आदि कारण क्या है,इनका न आज तक मुझे पता लगा है और न कोई लगा सकता है क्योंकि बिना कारण दिखने वाले द्वेष की तह में गैर कानूनी कारण भी हो सकते हैं, लेकिन इतना तो मैं निसन्देह कह सकता हूँ कि इसका प्रभाव अन्य कर्मचारियों पर पड़ता ही है, कैदी भी उससे अछूते नहीं रहते।

दफ्तर का क्लर्क अपने घर पर गाय रखा करता था। वह गाय जेल के अन्दर

कभी नहीं आती थी, इस बात की शिकायत हनीफ खां ने आई.जी. प्रिजन्स को की कि श्री मोहनलाल क्लर्क गाय रखता है। आई.जी. ने एतराज उठाया कि जेल कर्मचारी अपने क्वार्टर पर गाय नहीं रख सकता। इस पर क्लर्क ने स्वीकार कर लिया कि वह गाय को टोंक शहर में ही रखेगा। इसके बाद मोहन लाल ने गाय की व्यवस्था टोंक के किसी स्थानीय निवासी के यहां कर दी। इसके यहाँ एक छोटी बच्ची थी जिसके लिए दूध की आवश्यकता थी अतः बिना गाय के वह रह नहीं सकता। इधर जेलर भी गाय रखता था किन्तु हनीफ खां से दोस्ती होने के कारण आई.जी. के पास शिकायत नहीं हुई थी फिर भी रातों रात उसने गाय को निकाल दिया। बलिहारी है जेल कायदों की कि उसके कर्मचारियों के लिए गाय का दूध पीना गैर कानूनी नहीं किन्तु गाय गैर कानूनी है। मुझे तो बहुत ही हंसी आई।

जेलर व क्लर्क के बीच छोटी–मोटी बातों पर दल बन्दी चला ही करती थी। जेल की बनी हुई सब्जी जेलर के घर जाया करती थी परन्तु उसकी कोई कीमत नहीं चुकाई जाती थी। वार्डर बेचारों के पास कोई चारा नहीं था कि वे सब्जी को दरवाजे से बिना इन्द्राज किए न जाने दें क्योंकि उसके पीछे जेलर की शक्ति थी मगर क्लर्क के पास सब्जी कभी नहीं आती थी–दो एक बार जेलर ने टमाटर मेरे सामने क्लर्क के पास भिजवाने को कहा। मगर क्लर्क ने इनकार कर दिया। इसलिए जेलर को खतरा पहुंच गया और उसकी शिकायत के बचाव के लिए वह क्लर्क को और तरीकों से फँसाया रखना चाहता था। संयोग से एक दिन आई.जी. प्रिजन्स दौरे पर आए और क्लर्क के क्वार्टर में गए तो उन्हें जेल की एक दरी नजर आई। उन्होंने यह पूछा कि यह कैसे आई तो क्लर्क ने कहा कि यह जेलर साहब को पूछ कर लाया हूँ। वह दरी फौरन वापस भिजवाई गई। जेलर ने साफ इनकार कर दिया कि उसकी इजाजत से दरी नहीं लाई गई। इस पर रिपोर्ट का हुकम दिया गया। जेलर ने क्लर्क से जवाब लिया। हालांकि जवाब में यह बात आ गई थी कि मैंने दरी आपकी इजाजत से ली है और उसका इन्द्राज गेट रजिस्टर में है किन्तु जेलर को तथ्यों से कोई सरोकार नहीं था। वह तो पीछे पड़ा हुआ था कि आए हुए मौके को हाथ से नहीं जाना चाहिए और येन केन प्रकारेण क्लर्क को पृथक करना चाहिए। जेलर ने आनन–फानन आई.जी. प्रिजन्स् को लिखा कि क्लर्क ने बदनियती से दरी अपने काम ली और इसका इन्द्राज बाद में अपने हाथों से किया है। आई.जी. ने विभागीय जांच के लिए यह लिखते हुए स्पष्ट आदेश दिया कि कोई कानूनी पेचीदगी न रह जाय। इसलिए विभागीय जांच के नियमों को पूरा–पूरा पालन किया जाय। इधर जेलर महोदय के ज्ञान का यह नमूना था कि मेरी तलाशी के वक्त सेफ्टी रेजर को निगोसियेबल इन्स्ट्रूमैन्ट बता कर उसे मेरे पास रखने में तो वह कुछ जानता नहीं था। वह मेरे पास सलाह लेने

आया। मैंने उसे बताया कि आप खुद गवाह की हैसियत रखते हैं कि दरी आपसे पूछ कर ली गई है इसलिए अच्छा हो कि आप आई.जी. को लिखो कि यह जांच किसी और से करवाई जावे परन्तु जेलर को तो मौका हाथ से नहीं जाने देना था, उसने कहा– किसी भी तरह हो जांच तो मैं ही करूंगा, दूसरा जांच करे तो उसके बचने की गुंजाइश निकल सकती है। इस पर मैंने चार्ज शीट तैयार की और ऑर्डर शीट लिखने का तरीका बताया। उसके बाद जांच प्रारम्भ हुई तो मालूम हुआ कि केस में कोई दम नहीं है। उल्टा जेलर फँसता है क्योंकि गेट रजिस्टर में इन्द्राज तो एक पटवारी कैदी के हाथ का था जो बहुत पहले ही जेल से छूट गया था। अतः यह तो हो नहीं सकता कि इन्द्राज बाद में किया गया। पटवारी गवाह को क्लर्क ने अपने खर्चे पर बुलाया तो उसे जेलर ने दबाव डाला कि वह जेल एरिया में नहीं रह सकता। उस बेचारे को वहाँ से जाना पड़ा और जब वह नहीं था तो जेलर बयान लेने के लिए तैयार हो गया। आखिर बयान नहीं लेने थे–सो नहीं लिए। दो गेट के सन्तरी,कि जिनकी ड्यूटी में दरी जाना साबित हो गया था उनको भी नहीं सुना गया। क्लर्क के विरुद्ध रिपोर्ट मुकम्मिल करके आई.जी. को लिख दिया गया। कह नहीं सकता कि उसके बाद क्या हुआ, क्योंकि हम तो वहां से स्थानान्तरित कर दिये गए थे।

इस पार्टीबन्दी,पक्षपात और षड़यन्त्र का कर्मचारियों पर ही नहीं बन्दियों पर भी प्रभाव पड़ता था क्योंकि जेलर कैदियों के सामने भी क्लर्क पर उसकी अनुपस्थिति में व्यंग कसा करता था। एक ओर हमें ऐसे करिश्मों पर दुःख होता था तो दूसरी ओर इस प्रकार की उथलपुथल देखने में समय भी निकल जाया करता था। कुछ ऐसे कर्मचारी भी थे जो किसी भी पार्टी बन्दी में नहीं पड़ना चाहते थे। ऐसे वार्डर और हैडवार्डर सुजानसिंह इत्यादि इनसे डरकर और फूंक–फूंक कर कदम धरा करते थे। जहाँ तक सरकारी वस्तुओं के दुरुपयोग का प्रश्न था,वह अबाध गति से चलता था। मुमानियत तो केवल क्लर्क की दरी के कारण क्लर्क पर ही थी। जेलर के पास जेल का बहुत सा सामान उसके उपयोग के लिए रहता था,किन्तु जिसके हाथ में सत्ता रहती है उसको कौन पूछ सकता था।

जेलर को सबसे बड़ा विश्वास था तो कलैक्टर पर था। कलैक्टर के इशारों पर वह काम किया करता था इसलिए वह हमेशा उसे खुश रखता और इसी कारण उसको किसी की परवाह भी नहीं थी। हम लोग तो फिर भी बोलने और शिकायत करने की हिम्मत रखते थे। हम पर भी वह इतनी असभ्यता का व्यवहार किया करता था तो सामान्य बन्दियों का क्या हाल होगा, इसका अनुमान ही लगाया जा सकता है।

प्रकरण : ग्यारह

बिगड़े हुए इन्सान

मनुष्य ने सभ्यता का ज्यों–ज्यों विकास किया है त्यों–त्यों मानव जीवन की कुप्रवृत्तियों पर उसने अपने दृष्टिकोण से क्रान्तिकारी परिवर्तन किए हैं। राजस्थान में पुलिस के आई.जी. श्री बिलिमोरिया थे। उन्होंने हजारों रुपया खर्च करवा कर हर पुलिस थाने पर,''मेरे योग्य सेवा'' लिखवाया। जहाँ तक सौजन्य के प्रदर्शन का प्रश्न है कोई इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि पुलिस के दृष्टिकोण में आजादी के बाद महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। जो आजादी के पहले हुकूमत के लिए रखे गए थे वे आजादी के बाद सबके सेवक के रूप में हैं। किन्तु सही बात को देखना हो तो उनके व्यवहारिक आचरणों को देखो तब पता चले कि इन तख्तियों पर जो रुपया बरबाद किया गया है उससे एक भी पुलिस कर्मचारी का हृदय परिवर्तन नहीं हुआ है। मुझे ठा.देवीसिंह जी खुड़ी और ठा. भैरूँसिंह जी बडाबर ने बताया कि जयपुर की पुलिस कोतवाली में नजरबन्द किए जाने के बाद वे दो दिन रखे गए थे। उन्होंने बताया कि वहाँ उनके मन पर कितनी यातनाएँ पड़ी, इसका कोई अन्दाज नहीं लगाया जा सकता। उन्होंने कहा कि कोतवाली में रातभर मुलजिमों को पीटा जाता था कि वे अपने अपराध स्वीकार कर सबूत बरामद करवायें। अभियुक्त जब निर्ममता से पीटे जाते थे तो उनका कराहना और चिल्लाना इतना करुणाजनक था कि वे सो भी नहीं पाते थे। पीटने का ढ़ंग ऐसा शर्मनाक था कि एक अपराधी को पीट कर कुछ देर को सांस लेने के लिए छोड़ देते थे, फिर दूसरे के साथ भी यही क्रम बारी–बारी से रात भर चलता रहता था। अब आप ही निर्णय करें कि जनतंत्रीय भावनाओं और आजादी का बेपर्दगी के साथ मजाक उड़ाया जाता है। थानों के बाहर लटकती हुई''मेरे योग्य सेवा'' की तख्तियां इस सरकार का जीता जागता पाखण्ड है।

ठीक इसी प्रकार पुलिस की देखादेखी जेल भी पाखण्ड में क्यों पीछे रहने लगी और हर जेल पर लिखा गया। 'जेल सजा की जगह नहीं बिगड़े हुए इन्सानों को सुधारने की जगह है।' यह तड़क–भड़क बाहर से बड़ी आकर्षक लगती है किन्तु भीतर क्या हो रहा है यह एक भुक्तभोगी ही जान सकता है। मैं खुद मानता हूँ कि किसी देश की वास्तविक उन्नति के लिए जिस निर्माण कार्य की आवश्यकता होती है वह केवल दो ही जगह से सम्पादित हो सकती है। एक तो स्कूलों से और दूसरी जेलों से। इसीलिए स्कूल के अध्यापकों और जेल के

जेलरों पर राष्ट्र निर्माण के महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व हैं। परन्तु दुर्भाग्य यह है कि सरकार का ध्यान इन दोनों सेवाओं की ओर नहीं जाता। यही कारण है अध्यापक व जेल कर्मचारियों की उनके वेतन की दृष्टि से उपेक्षा की जाती है। जेल वालों की तो चौबीस घण्टे की ड्यूटी रहती है– कभी छुट्टी नहीं, वार्डरों को दिन में 9–9 घण्टे पहरा देना– यह सब हंसी खेल नहीं, ऊपर से जो सुख सुविधाएँ हैं उनमें कोई आकर्षण नहीं इसलिए देखा यह जाता है कि जेल की नौकरियों में वे लोग आते हैं जो जीवन के दूसरे क्षेत्रो में अयोग्य और असफल होते हैं। ऐसे लोग भला क्या किसी व्यक्ति का निर्माण और सुधार कर सकते हैं, वे ही जानें। राजस्थान की जेलों का ध्येय आदर्श की ओर जाना है किन्तु इसके व्यवहारिक पहलू की ओर आई.जी. प्रिजन्स का ध्यान नहीं जाता। इसलिए वे अपने विभाग के कर्मचारियों की शिकायतों को एक प्रत्यर्थी की भांति सुनते हैं। यदि जेल बिगड़े हुए इन्सानों को सुधारने की जगह है तो सुधार का तरीका भी आदर्श होना चाहिए। मानव स्वभाव के संसार भर के विशेषज्ञ एक मत से चिल्लाते हैं कि मनुष्य को दण्ड की अपेक्षा प्रेम,सहानुभूति और संस्कारों से सुधारा जाय तो वह सुधार सत्य और स्थाई होगा। डण्डे के बल से कोई व्यक्ति सुधर सकता है, यह बात कोई भी मानस शास्त्री नहीं मानता। इसलिए जेलों के वातावरण में मन्दिर की सी पवित्रता और सच्चे न्यायालय की सी भव्यता होनी चाहिए।

अब मैं सिद्धान्त चर्चा के बाद व्यावहारिक पहलू पर आता हूँ और टोंक जेल के कुछ संस्मरण यहाँ देना अपना कर्तव्य समझता हूँ। सुधार की पहली आवश्यकता है व्यवहार में नम्रता और शिष्टाचार। मैंने यह देखा कि स्वयं आई.जी. प्रिजन्स तक अपने मातहत किसी भी अधिकारी को, चाहे वह किसी भी श्रेणी व उम्र का क्यों न हो 'जी' या 'श्री' आदि आदर सूचक शब्द नहीं लगाते तो निम्न कर्मचारियों द्वारा कैदियों का आदर और उनसे शिष्टता का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। उदाहरण के तौर पर टोंक जेल में रसोइये का नाम छगनसिंहजी था जो साठ वर्ष के थे और शराब बनाने के अपराध में आये थे व अपराध स्वीकार किया था। पूछने पर बताया कि झूठ तो कैसे बोलता, उसी थानेदार ने यह आश्वासन देकर कि अपराध स्वीकार करने पर मैं छोड़ दिया जाऊंगा,बन्दी बनाया जिसे मैं बोतलें देता और पिलाता था। परन्तु मुझे छः माह की सजा और 200 रुपये जुर्माना हुआ। छगनसिंहजी सीधे व नम्र थे इसलिए बन्दी उन्हें 'बाबोसा' कहते थे। एक दिन जेलर के सामने सवाईसिंह से बात करते हुए मेट ने छगनसिंह जी कह दिया तो वह नाराज हो गया व फटकार बताई कि हमारे सामने कैदी के 'जी' लगाते हो मेट ने माफी मांगकर पीछा छुड़ाया। आप ही सोचिए ऐसे अफसरों से क्या निर्माण कार्य सम्पादित हो सकता है ?